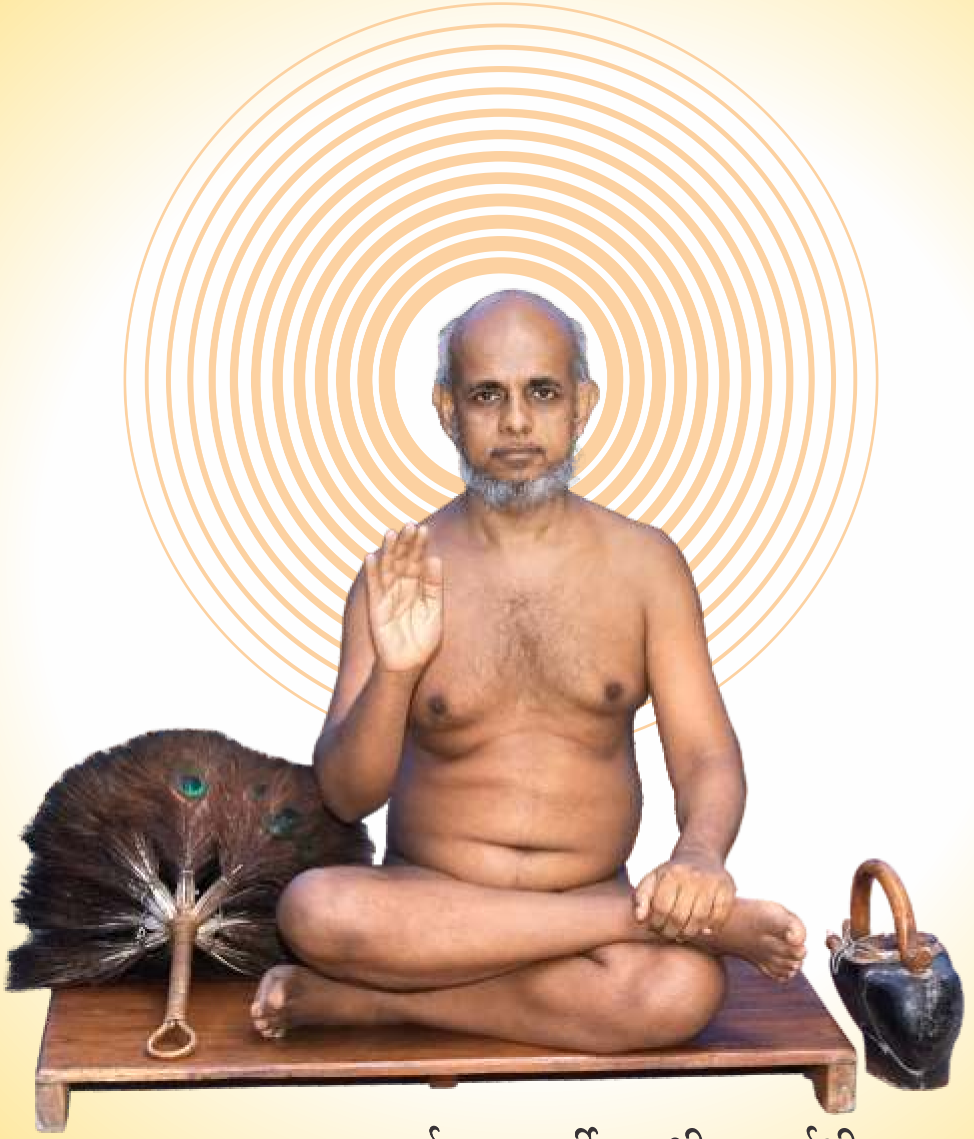

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

✻ जन्मदिवस 19–03–1971 ✻ मुनिदीक्षा–11–05–1989 ✻ आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणाः–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

आचार्य कुन्दकुन्द :
द्रव्यविचार

लेखक

डॉक्टर कमलचन्द सोगाणी

प्रकाशक
जैन विद्या संस्थान
महावीरजी (राजस्थान)

(परम्परानायक)

परम पूज्य चारित्र–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त–शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

परम पूज्य सिद्धान्त–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

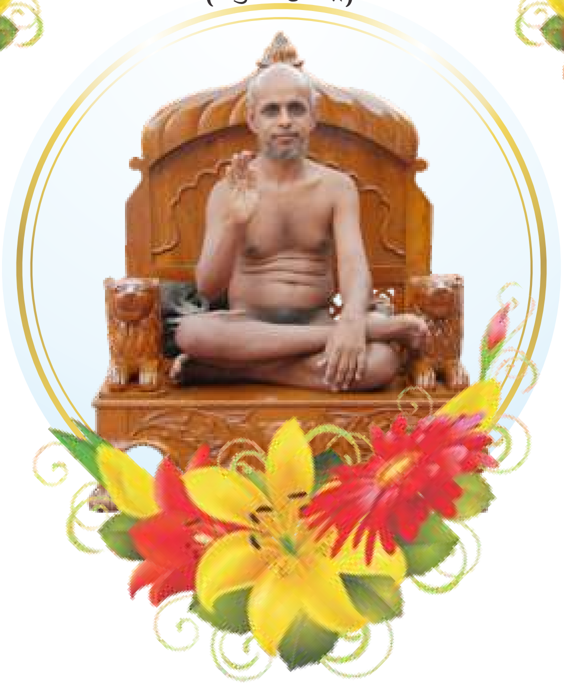

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्राय: होता है। फलत: उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तुत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि–परिवार

आचार्य कुन्दकुन्द : द्रव्यविचार

डॉ० कमलचन्द सोगाणी
(सेवानिवृत्त प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र)
परामर्शदाता
अपभ्रंश साहित्य अकादमी
जयपुर

प्रकाशक

जैनविद्या संस्थान
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी
राजस्थान

☐ प्रकाशक

जैनविद्या संस्थान
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी
श्रीमहावीरजी (राज) 322220

☐ प्राप्ति स्थान

1 जैनविद्या संस्थान, श्रीमहावीरजी
2 अपभ्रंश साहित्य अकादमी
भट्टारकजी की नशिया
सवाई रामसिंह रोड, जयपुर–302004

☐ प्रथम बार, 1000, 1989

☐ मूल्य 15 00

☐ मुद्रक

पॉपुलर प्रिन्टर्स
मोती डूंगरी रोड,
फतेह टीबा मार्ग, जयपुर

प्रकाशकीय

जैन-जगत् मे सर्वाधिक विश्रुत आचार्य कुन्दकुन्द के द्विसहस्राब्दी वर्ष के अन्तर्गत जैनविद्या सस्थान की ओर से आचार्यश्री से सम्बन्धित यह द्वितीय प्रकाशन है।

भगवान् महावीर के सिद्धान्तो को ग्रथ रूप मे निवद्ध कर उन्हे स्थायित्व प्रदान कर आचार्य कुन्दकुन्द ने दिगम्बर जैन साहित्य और आम्नाय को तो सुरक्षित रखा ही, साथ ही दार्शनिक-जगत् मे भी अमूल्य योगदान दिया ।

आचार्य कुन्दकुन्द की उपलब्ध सभी रचनाए तात्विक चिन्तन से ओत-प्रोत हैं। आचार्यश्री प्रथम जैन दार्शनिक हैं जिन्होने अपने ग्रन्थो मे द्रव्य की अवधारणा का विशद वर्णन किया है।

जगत् मे जो कुछ है वह 'सत्' है। सत् अर्थात् अस्तित्वशील। जो सत् है उसी की सत्ता है। इस प्रकार जगत् की प्रत्येक वस्तु 'सत्' है। जैन दर्शन के अनुसार जो सत है वह द्रव्य है। आचार्य कुन्दकुन्द ने द्रव्य का लक्षण बताया है—

दव्व सल्लक्खणिय उप्पादव्ययधुवत्तसजुत ।
गुणपज्जयासय वा ज त भण्णति सव्वण्हु ॥10॥

पचास्तिकाय,

जिसका लक्षण सत् है वह द्रव्य है। जो उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य से युक्त है वह द्रव्य है। जो गुण और पर्याय का आश्रय है वह द्रव्य है।

द्रव्य छह प्रकार के हैं—जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल। प्रत्येक द्रव्य का अस्तित्व, स्वरूप, गुण और परिणमन भिन्न है, पृथक् है। छहो द्रव्यो मे जीव ही चेतन है शेष सब अचेतन—जड है। जानना-देखना जीव का स्वभाव है। वह अन्य द्रव्यो को उनके स्वभाव से जाने, उनके अपने से भिन्न स्वरूप को समझे, अपने को उनमे घुला-मिला न समझे, यह भली-भाति समझाने के लिए, छहो द्रव्यो के स्वरूप से परिचय कराने के दृष्टिकोण से आचार्यों ने उनका विशद वर्णन किया है।

गूढ, गभीर एव वृहद् ग्रथो का 'स्वाध्याय' आज की व्यस्त एव गतिशील जीवन-शैली मे कठिन होता जा रहा है। 'लघु सस्करण' समय की माग है। इसी विचार से हमारे सहयोगी डॉ० कमलचन्दजी सोगाणी ने आचार्य कुन्दकुन्द के विभिन्न ग्रथो से 'द्रव्य' सम्बन्धी महत्वपूर्ण गाथाओ का सकलन किया है जो आपके समक्ष 'आचार्य कुन्दकुन्द द्रव्य विचार' के रूप मे प्रस्तुत है। इस प्रकार के सकलन मूल ग्रथो की उपादेयता या महत्व को कम नही करते अपितु पाठको को वृहद् ग्रथो से विशिष्ट विषय से सम्बन्धित सक्षिप्त, क्रमवद्ध एव प्रासगिक सामग्री 'एक ही स्थान पर' उपलब्ध करा कर विषय को सरल, सहजगम्य और सुरुचि-पूर्ण रूप मे प्रस्तुत करते हैं।

बडे-बडे ग्रथो का आलोडन कर उनमे से कुछ विशिष्ट गाथाओ का चयन कर अत्यन्त सक्षेप मे 'चयनिका' के रूप मे ग्रथ का सार प्रस्तुत कर देना डॉ० सोगाणी की अपनी शैली है, पृथक् पहचान है। यह पुस्तक भी उनकी इसी शैली का निदर्शन है। इस पुस्तक की एक विशेपता और है–इसमे मूलगाथा, उसका व्याकरणिक विश्लेषण और उसके आधार से निसृत हिन्दी अनुवाद दिया गया है जिससे पाठक प्राकृत–व्याकरण को भी समझ सकें और आचार्यश्री के मूलहार्द को भी।

हमारे आग्रह पर उन्होने अल्प समय मे ही यह सकलन तैयार किया इसके लिए हम उनके आभारी हैं।

मुद्रण के लिए पॉपुलर प्रिन्टर्स धन्यवादार्ह है।

महावीर निर्वाण दिवस 2516
दीपमालिका, वि स 2046
जयपुर

ज्ञानचन्द्र खिन्दूका
सयोजक
जैनविद्या सस्थान समिति

प्रस्तावना

यह बात निर्विवाद है कि हम विभिन्न वस्तुओ के सम्पर्क मे आते रहते है। हम आंखो से रग देखते है, कानो मे ध्वनि सुनते है, नाक से गध का ग्रहण करते है, जीभ से स्वाद लेते है तथा स्पर्शन मे स्पर्श का अनुभव करते है। इस तरह मे हम अपनी पाचो इन्द्रियो द्वारा वस्तुओ से ससर्ग बनाये रखते है। इन्द्रियो के माध्यम मे हम वस्तु-जगत् से जुडे रहते है। यह वस्तु-जगत् ही आचार्य कुन्दकुन्द के शब्दो मे पुद्गल द्रव्य है। उस पुद्गल द्रव्य मे वर्ण, रस, गध और स्पर्श वर्तमान रहते है तथा जो विभिन्न प्रकार का शब्द है, वह भी पुद्गल है (9)। पुद्गल के क्षेत्र को समझाते हुए आचार्य कुन्दकुन्द कहते है कि इन्द्रिया तथा इन्द्रियो द्वारा भोगे जाने योग्य विषय, शरीर, वाणी तथा अन्य भौतिक वस्तुए सभी पुद्गल पिण्ड है (113, 114)।

पुद्गलात्मक वस्तुओ के साथ-साथ हमारे चारो ओर वनस्पति, कीट, पशु-पक्षी और मनुष्य भी वर्तमान है। इन सभी मे एक ओर पुद्गल के गुण वर्तमान है तो दूसरी ओर बढना, भयभीत होना तथा सुखी-दुखी होने की स्थितिया भी दृष्टिगोचर होती है। इस तरह से यह दो द्रव्यो की मिश्रित अवस्था है। एक ओर पुद्गल द्रव्य है तो दूसरी ओर जीव द्रव्य। आचार्य कुन्दकुन्द इन सभी को ससार मे स्थित जीव कहते है (22), यह दो द्रव्यो की मिश्रित अवस्था है। पुद्गल के साथ जीव की उपस्थिति ही मे यह मिश्रण उत्पन्न होता है। पुद्गल जीव को विभिन्न अगो मे आबद्ध किये हुए रहता है। पुद्गल और जीव की मिश्रित अवस्था मे जब पुद्गल जीव पर अधिकतम दबाव डालता है तो एक इन्द्रिय (स्पर्शन) ही का विकास हो पाता है। जैसे-जैसे यह दबाव कम होता जाता है वैसे-वैसे दो इन्द्रिया (स्पर्शन और रसना), तीन इन्द्रिया (स्पर्शन, रसना और घ्राण), चार इन्द्रिया, (स्पर्शन, रसना, घ्राण और चक्षु) और पाच इन्द्रिया (स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु और कर्ण) विकसित हो जाती है (28-34)।

आचार्य कुन्दकुन्द का कथन है कि एक इन्द्रियवाले जीवो मे केवल सुख-दुखात्मक चेतना ही क्रियाशील होती है। दो इन्द्रिय से पचेन्द्रिय तक के जीवो

मे (शुभ-अशुभ) प्रयोजनात्मक चेतना का विकास हो जाता है। यहा यह समझना चाहिए कि प्रयोजनात्मक चेतना मनुष्य मे ही पूर्णरूप मे प्रकट होती है। बाकी जीवो मे इसका प्रकटीकरण अचेतन स्थिति मे ही होता है। विचार का विकास मनुष्य की ही उपलब्धि है। विचार के विकास के साथ ही उद्देश्यात्मक जीवन का विकास होकर शुभ-अशुभ प्रयोजनो मे जीने का विकास हो जाता है (24 से 28)।

यह सभव माना गया है कि जीव पर पुद्गल का दबाव कम होते-होते शून्य हो जाए। ऐसी स्थिति मे जीव अपने स्वरूप मे स्थित हो जाता है। ऐसा जीव ज्ञान-चेतना वाला कहा गया है। इस तरह से पुद्गल के दबाव से रहित जीव ज्ञान-चेतना वाला रहता है और पुद्गल के दबाव से युक्त जीव प्रयोजन-चेतना और (सुखदुखात्मक) फल-चेतना को लिये हुए होता है (24 से 27)। आचार्य कुन्दकुन्द का कथन है कि कुछ जीव सुख दुखात्मक फल को, कुछ शुभ-अशुभ प्रयोजन को तथा कुछ ज्ञान को अनुभव करते है (25)। यहा पर यह ध्यान देने योग्य है कि जीव और पुद्गल की मिश्रित अवस्था का अनुभव सभी की सामान्य अनुभूति है, किन्तु पुदगल के दबाव से रहित जीव की अनुभूति केवल तीर्थंकरो या योगियो की ही अनुभूति होती है।

यह सर्व-अनुभूत तथ्य है कि पौद्गलिक वस्तुओ मे अवस्था-परिवर्तन होता है। इसी परिवर्तन को पर्याय कहा गया है। पौद्गलिक मिश्रण के कारण जीव की अवस्थाओ मे भी परिवर्तन होता है। पुद्गल के निमित्त से जीव क्रिया-सहित होते है (13)। परिवर्तन और क्रिया काल द्रव्य के कारण उत्पन्न होते है (138)। परिवर्तन का अर्थ है एक अवस्था के बाद दूसरी अवस्था का आना। यह काल द्रव्य के बिना सभव नही है। क्रिया मे जो निमित्त है वह धर्म द्रव्य है तथा स्थिति मे जो निमित्त है वह अधर्म द्रव्य है। द्रव्यो को स्थान देने के लिए आकाश द्रव्य है। इस तरह से लोक मे 6 द्रव्यो की व्यवस्था है (14, 134)। आचार्य कुन्दकुन्द का कहना है कि अनेक जीव, पुद्गलो का समूह, धर्म, अधर्म, आकाश और काल ये वास्तविक द्रव्य कहे गये है। ये सभी द्रव्य अनेक गुण और पर्यायो सहित होते है (6)।

आचार्य कुन्दकुन्द के अनुसार जो गुण और पर्याय का आश्रय है वह द्रव्य है (139)। इसका अभिप्राय यह है कि गुण और पर्याय को छोडकर द्रव्य कोई स्वतन्त्र वस्तु नही है। दूसरे शब्दो मे द्रव्य गुणो और पर्यायो के बिना नही होता, तथा गुण और पर्याएँ द्रव्य के बिना नही होती (142,143)। उदाहरणार्थ, स्वर्ण

से पृथक् उसके पीलेपन आदि गुणो का तथा कुण्डल आदि पर्यायो का अस्तित्व सम्भव नही है। अत यह स्पष्ट है कि जो नित्यरूप से द्रव्य मे पाया जाय वह गुण है और जो परिवर्तनशील है वह पर्याय है। सक्षेप मे, पर्याय परिणमनशील होती है और गुण नित्य। इसके अतिरिक्त गुण वस्तु मे एक साथ ही विद्यमान रहते है किन्तु पर्याएँ क्रमश उत्पन्न होती हैं। वस्तु के विभिन्न आकारो को व्यजन पर्याय कहा गया है। उदाहरणार्थ—जीव का मनुष्य, देव आदि विभिन्न योनियो मे जन्म लेना जीव की व्यजन पर्याएँ है। पर्याय का एक दूसरा भेद और है जिसे अर्थ पर्याय कहा गया है। बात यह है कि वस्तु के गुणो की अवस्थाओ मे प्रत्येक क्षण परिवर्तन होता रहता है, जैसे—जड वस्तु मे रूप आदि गुण तो सदैव विद्यमान रहते है, किन्तु इन गुणो की अवस्थाएँ परिवर्तित होती रहती है। इसी के फलस्वरूप यह कहा जाता है कि वस्तु नई से पुरानी हो गई, मीठी से खट्टी हो गई इत्यादि। यहा वस्तु मे रूप, रस आदि का लोप नही हुआ किन्तु उनकी अवस्थाएँ बदल गई। परिवर्तन का यह क्रम अनन्त है। इस प्रकार के परिवर्तन को अर्थ पर्याय कहा गया है। अत वस्तु मे व्यजन पर्याय और अर्थ पर्याय दोनो ही सदा उपस्थित रहती है। यहा यह स्मरण रखना चाहिये कि द्रव्य का गुण-पर्याय-वाला होना द्रव्य को नित्य-अनित्य या परिणामी-नित्य सिद्ध करता है। द्रव्य गुण-अपेक्षा नित्य है और पर्याय-अपेक्षा अनित्य या परिणामी।

द्रव्य की एक दूसरी परिभाषा भी आचार्य कुन्दकुन्द ने दी है जो उपर्युक्त परिभाषा मे तत्वत भिन्न नही है। उसके अनुसार द्रव्य वह है जो सत् है और सत् उसे कहते है जो उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य-युक्त हो (139)। अर्थात् जिसमे उत्पत्ति, विनाश और स्थिरता एक समय मे पाई जावे वह सत् है। उदाहरणार्थ-स्वर्ण के ककण से जब कुण्डल बनाये जाते है तो कुण्डल पर्याय की उत्पत्ति, ककण पर्याय का विनाश और पीले आदि गुणोवाले स्वर्ण की स्थिरता एक समय मे दृष्टिगोचर होती है। यह उदाहरण व्यजन पर्याय का है। द्रव्य का उत्पाद, व्यय और ध्रौव्यात्मक लक्षण अर्थ पर्यायवाले उदाहरण मे भी घटित होता है जैसे—दही मीठे से खट्टा हुआ तो रस गुण की मीठी पर्याय का व्यय (विनाश) हुआ, खट्टी पर्याय का उत्पाद (उत्पत्ति) हुआ और दही की ध्रौव्यता (स्थिरता) ज्यो की त्यो रही। इस तरह से उत्पत्ति और विनाश पर्यायाश्रित है और स्थिरता गुणाश्रित। अत हम कह सकते है कि द्रव्य की ये विभिन्न परिभाषाए इस बात की द्योतक है कि द्रव्य नित्यानित्यात्मक या परिणामी-नित्य है।

द्रव्य के छ भेद है—(1) जीव, (2) पुद्गल, (3) धर्म, (4) अधर्म,

(5) आकाश और (6) काल। किन्तु जीव और अजीव के भेद से द्रव्य को दो भागो मे भी विभाजित किया जा सकता है क्योंकि पुद्गल से लेकर काल तक के सभी द्रव्य अजीव मे समाविष्ट है (3)। इस तरह से आचार्य कुन्दकुन्द एक ओर अनेकत्ववादी है तो दूसरी ओर द्वित्ववादी, परन्तु यदि सत्ता सामान्य के दृष्टिकोण से विचार किया जाय तो जीव-अजीव का भेद ही समाप्त हो जाता है। सत्ता सब द्रव्यो मे व्याप्त है (140)। इस अपेक्षा से सब द्रव्य एक ही है। अपने विशेष गुणो के कारण उन सब द्रव्यो मे भेद है किन्तु सत्ता की अपेक्षा सब द्रव्यो मे अभेद है। यह निश्चित है कि कोई भी द्रव्य सत्ता का उल्लघन नही कर सकता (1)। यह सत्ता सामान्य का दृष्टिकोण आचार्य कुन्दकुन्द को एकत्ववादी घोषित करता है। इस तरह से एकत्ववाद, द्वित्ववाद और अनेकत्ववाद तीनो ही आचार्य कुन्दकुन्द के द्रव्य मे वर्तमान है। अब हम यहा प्रत्येक द्रव्य की पृथक्-पृथक् व्याख्या करेंगे।

जीव अथवा आत्मा—आचार्य कुन्दकुन्द के अनुसार जीव अथवा आत्मा स्वतत्र अस्तित्ववाला द्रव्य है। अपने अस्तित्व के लिए न तो यह किसी दूसरे द्रव्य पर आश्रित है और न इस पर आश्रित कोई और दूसरा द्रव्य है, सब द्रव्यो मे जीव ही श्रेष्ठ द्रव्य है, क्योकि केवल जीव को ही हित-अहित, हेय-उपादेय, सुख-दु ख आदि का ज्ञान होता है (5)। अन्य द्रव्यो-पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश काल मे इस प्रकार के ज्ञान का सर्वथा अभाव होता है। द्रव्य की सामान्य परिभाषा के अनुसार आत्मा परिणामी-नित्य है। द्रव्य-गुण अपेक्षा से आत्मा नित्य है किन्तु पर्याय अपेक्षा से परिणामी। आत्मा के ज्ञानादि गुणो की अवस्थाए परिवर्तित होती रहती है तथा ससारी आत्मा-विभिन्न जन्म ग्रहण करता है, इन अपेक्षाओ से आत्मा परिणामी है और आत्मा कभी भी इन परिवर्तनो मे नष्ट नही होता, इस अपेक्षा से नित्य है (145, 146, 147)। यहा यह कहा जा सकता है कि यह लक्षण ससारी आत्मा मे तो घटित हो जाता है, किन्तु मुक्त आत्मा मे नही। किन्तु ऐसा कहना उचित नही है, क्योकि मुक्त-आत्मा की नित्यता के विषय मे तो सदेह है ही नही और उसमे ज्ञानादि गुणो का स्वरूप परिणमन होता है इस अपेक्षा से वह परिणामी भी सिद्ध होती है। अत आत्मा द्रव्य-गुण-दृष्टि से नित्य और पर्याय- दृष्टि से परिणामी स्वीकार किया गया है।

यहा यह ध्यान देने योग्य है कि आचार्य कुन्दकुन्द के अनुसार आत्मा एक नही अनेक अर्थात् अनन्त माने गये है। आत्मा का लक्षण चैतन्य है (7) इस विशेषता के कारण आत्मा का अन्य द्रव्यो से भेद होता है। यह चैतन्य ज्ञानात्मक,

भावात्मक और क्रियात्मक रूप से प्रकट होता है। अत हम कह सकते हैं कि जहां चैतन्य है वहा ज्ञान है, भाव है और क्रिया है। ज्ञान या चेतना आत्मा का आगन्तुक धर्म नही है किन्तु स्वभाव/स्वाभाविक धर्म है (53, 54)। आत्मा ज्ञान होने के साथ-साथ कर्ता और भोक्ता भी है। आत्मा ससार अवस्था मे अपने शुभ-अशुभ कर्मों का कर्ता है और उनके फल-स्वरूप उत्पन्न सुख-दु ख का भोक्ता भी है (20)। मुक्त अवस्था मे आत्मा अनन्तज्ञान का स्वामी होता है, शुभ-अशुभ से परे शुद्ध क्रियाओं का (राग-द्वेष-रहित क्रियाओ का) कर्ता होता है और अनन्त आनन्द का भोक्ता होता है।

आचार्य कुन्दकुन्द जीव को स्वदेह परिमाण स्वीकार करते है। जिस प्रकार दूध मे डाली हुई पद्मरागमणि (लालमणि) उसे अपने रग से प्रकाशित कर देती है, उसी प्रकार देह मे रहनेवाला जीव भी अपनी देहमात्र को प्रकाशित करता है अर्थात् वह स्वदेह मे ही व्याप्त होता है, देह से वाहर नही (35)।

आचार्य कुन्दकुन्द की मान्यता है कि ससारी आत्मा अनादिकाल से कर्मों से वद्ध है। इसी कारण प्रत्येक ससारी जीव जन्म-मरण के चक्कर मे पडा रहता है। इतना होते हुए भी प्रत्येक ससारी आत्मा वस्तुत सिद्ध समान है (23)। दोनो मे भेद केवल कर्मो के वन्धन का है। यदि कर्मों के वन्धन को हटा दिया जाय तो आत्मा का सिद्ध-स्वरूप जो अनन्त ज्ञान, सुख और शक्ति रूप है, प्रकट हो जाता है।

आचार्य कुन्दकुन्द के अनुसार जीव को प्रभु (अपने विकास मे समर्थ) कहा गया है (20) इसका अभिप्राय यह है कि जीव स्वय ही अपने उत्थान व पतन का उत्तरदायी है। वही अपना शत्रु है और वही अपना मित्र। वन्धन और मुक्ति उसी के आश्रित है। अज्ञानी से ज्ञानी होने का और वद्ध से मुक्त होने का सामर्थ्य उसी मे है, वह सामर्थ्य कही वाहर से नही आता, वह तो उसके प्रयास से ही प्रकट होता है।

आचार्य कुन्दकुन्द ने जीवो का वर्गीकरण दो दृष्टिकोण से किया है—(1) सासारिक और (2) आध्यात्मिक। सासारिक दृष्टिकोण से जीवो का वर्गीकरण इन्द्रियो की अपेक्षा से किया गया है (29 से 34)। सवसे निम्न स्तर पर एक इन्द्रिय जीव हैं जिनके केवल एक स्पर्शन इन्द्रिय ही है। वनस्पति वर्ग एक इन्द्रिय जीवो का उदाहरण है। इनमे चेतना सवसे कम विकसित होती है। इनसे उच्चस्तर के जीवो मे दो से पाच इन्द्रियो तक के जीव है। सीपी, शख, विना पैरो के

कीडे आदि के स्पर्शन और रसना ये दो इन्द्रिया होती है। (31)। जूं, खटमल, चीटी, बिच्छू आदि के स्पर्शन, रसना और घ्राण ये तीन इन्द्रिया होती हैं। (32)। मच्छर, मक्खी, भँवरा आदि जीवो के स्पर्शन, रसना, घ्राण और चक्षु ये चार इन्द्रिया होती है। (33)। मनुष्य, पशु-पक्षी आदि जीवो के स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु और कर्ण ये पाच इन्द्रिया होती हैं (34)।

आध्यात्मिक दृष्टिकोण से जीव तीन प्रकार के हैं—बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा। जो व्यक्ति यह मानता है कि इन्द्रिया ही परम सत्य हैं, वह बहिरात्मा है (41)। बहिरात्मा शरीर को ही आत्मा समझता है और शरीर के नष्ट होने पर अपने को नष्ट हुआ समझता है। वह इन्द्रियो के विषयो मे आसक्त रहता है, वह इच्छित वस्तु के सयोग से प्रसन्न होता है और उसके वियोग मे अप्रसन्न। वह मृत्यु के भय से आक्रान्त रहता है। वह कार्माण-शरीर-रूपी काचली मे ढके हुए ज्ञान-रूपी शरीर को नही जानता है, इसलिए बहुत काल तक वह ससार मे भ्रमण करता है।

अन्तरात्मा अपने आत्मा को अपने शरीर मे भिन्न समझता है (41)। यह निर्भय होता है अत उसे लोकभय, परलोकभय, मरणभय आदि नही होते। उसके कुल, जाति, रूप, ज्ञान, धन, बल, तप और प्रभुता का मद नही होता। आत्मतत्व मे रुचि पैदा होने से उसकी सासारिक पदार्थो मे आसक्ति नही होती और वह शीघ्र ही जन्म-मरण के चक्कर से छूट जाता है।

परमात्मा वह है जिसने आत्मोत्थान मे पूर्णता प्राप्त कर ली है और काम, क्रोधादि दोषो को नष्ट कर लिया है एव अनन्त ज्ञान, अनन्त शक्ति और अनन्त सुख प्राप्त कर लिया है तथा जो सदा के लिए जन्म-मरण के चक्कर मे मुक्त हो गया है (41)।

आचार्य कुन्दकुन्द का कहना है कि साधक बहिरात्मा को छोडे और अन्तरात्मा बनकर परमात्मा की ओर अग्रसर हो (42)।

पुद्गल-जिसमे रूप, रस, गध और स्पर्श ये चारो गुण पाये जावे, वह पुद्गल है (9)। सब दृश्यमान पदार्थ पुद्गलो द्वारा निर्मित है। पुद्गल द्रव्य के दो भेद हैं– परमाणु और स्कध। दो या दो से अधिक परमाणुओ के मेल को स्कध कहते हैं। जो पुद्गल का सबमे छोटा भाग है, जिसे इन्द्रिया ग्रहण नही कर सकती और जो अविभागी है, वह परमाणु है (109)। परमाणु अविनाशी तथा

शब्दरहित होता है (109)। शब्द की उत्पत्ति स्कन्धो के परस्पर टकराने से होती है (111)।

आचार्य कुन्दकुन्द के अनुसार प्रत्येक परमाणु चार गुण वाला होता है। इन परमाणुओ के विभिन्न प्रकार के सयोगो मे नानाविध पदार्थ बन जाते है (110)। अत पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु ये चारो तत्व विभिन्न प्रकार के परमाणुओ से निर्मित नही हैं अपितु एक ही प्रकार के परमाणुओ से उत्पन्न है। यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि प्रत्येक परमाणु मे पाच रसो (तीता, खट्टा, कडवा, मीठा और कसैला) मे से कोई एक रस, पाच रूपो (काला, नीला, पीला, सफेद और लाल) मे से कोई एक रूप, दो गन्धो (सुगन्ध और दुर्गन्ध) मे से कोई एक गन्ध, चार स्पर्शो, (रूक्ष, स्निग्ध, शीत और उष्ण) मे से कोई दो अविरोधी स्पर्श होते है (112)। परमाणु या तो रूक्ष-शीत या रूक्ष-ऊष्ण या स्निग्ध-शीत या स्निग्ध-उष्ण होता है। कोमल, कठोर, भारी और हल्का ये चार स्पर्श स्कन्ध अवस्था मे ही उत्पन्न होते है।

यहा यह प्रश्न उपस्थित होता है कि परमाणुओ मे बन्ध किस प्रकार होता है ? इसके उत्तर मे आचार्य कुन्दकुन्द का कथन है कि परमाणु के परस्पर बन्ध का कारण स्निग्धता और रूक्षता है। स्निग्ध-गुण और रूक्ष गुण के अनन्त अश है। जिस प्रकार बकरी, गाय, भैंस और ऊँट के दूध तथा घी मे उत्तरोत्तर अधिक रूप मे स्निग्ध-गुण, रहता है और धूल, बालू तथा बजरी आदि मे उत्तरोत्तर अधिक रूप मे रूक्ष गुण रहता है उसी प्रकार से परमाणुओ मे भी स्निग्ध और रूक्ष गुणो के न्यूनाधिक अशो का अनुमान होता है।

परमाणुओ का परस्पर बन्ध कुछ नियमो के अनुसार माना गया है। जो परमाणु स्निग्धता और रूक्षता गुण मे निम्नतम है उसका बन्ध किसी भी परमाणु से नही होता। इसके अतिरिक्त जिन परमाणुओ मे स्निग्धता और रूक्षता के समान अश है उनका भी किसी भी दूसरे परमाणु से बन्ध नही होता। परन्तु जिनमे स्निग्धता और रूक्षता के अश दूसरे परमाणुओ से दो अधिक हो उनमे आपस मे बन्ध होता है जैसे दो अश वाले का चार अश वाले से, चार का छ अश वाले से, इसी प्रकार तीन का पाच अश वाले से, पाच का सात अश वाले से, इसी तरह आगे भी जानना चाहिये (117,118)। यहा यह बात स्मरणीय है कि अधिक गुणवाला परमाणु अल्प गुणवाले परमाणु को अपने रूप मे परिवर्तित कर लेता है। इस तरह परमाणुओ मे सयोग-मात्र ही नही होता वरन् उनमे परस्पर एकरूपत्व स्थापित हो जाता है।

धर्म-अधर्म—जीव तथा पुद्गल की तरह धर्म-अधर्म भी दो स्वतन्त्र द्रव्य हैं। यहा धर्म का अर्थ पुण्य और अधर्म का अर्थ पाप नही है। आचार्य कुन्दकुन्द मे इनका एक विशेष अर्थ है। यह बात ध्यान देने योग्य है कि छ द्रव्यो में से केवल दो ही द्रव्य जीव व पुद्गल सक्रिय है (13)। शेष सब द्रव्य निष्क्रिय हैं। एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश मे गमन को क्रिया कहते हैं। इस क्रिया मे जो सहायक हो वह धर्म द्रव्य है (10,11)। धर्म द्रव्य उसी प्रकार क्रिया में सहायक होता है जिस प्रकार मछलियो को चलने के लिए जल (128)। जैसे हवा दूसरी वस्तुओं मे गमन क्रिया को उत्पन्न कर देती है वैसे धर्म द्रव्य गमन क्रिया उत्पन्न नही करता, वह तो गमन क्रिया का उदासीन कारण है न कि प्रेरक कारण। धर्म द्रव्य जो स्वय नही चल रहे हैं उन्हे बलपूर्वक कभी नही चलाता है। यह बात स्मरण रखने योग्य है कि धर्म द्रव्य रूप, रस, गध, शब्द और स्पर्श से रहित है। सम्पूर्ण लोकाकाश मे व्याप्त है और अखण्ड है (127)। अत धर्म द्रव्य स्वय गमन नही करता और न अन्य द्रव्यो को गमन कराता है किन्तु जीव और पुद्गल के गमन का उदासीन कारण है। (130,132)।

अधर्म द्रव्य जीव और पुद्गलो की स्थिति मे उसी प्रकार सहायक होता है जिस प्रकार चलते हुए पथिको के ठहरने मे पृथ्वी (129)। यह चलते हुए जीव और पुद्गलो को ठहरने को प्रेरित नही करती है किन्तु स्वय ठहरे हुओ को ठहरने मे उदासीन रूप से कारण होती है (129)। यह भी सम्पूर्ण लोकाकाश मे व्याप्त है, अखण्ड है और रूप, रस आदि से रहित है।

आकाश—जो जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और काल को स्थान देता है वह आकाश है (133)। यह आकाश एक है, सर्वव्यापक है, अखण्ड है और रूप-रसादि गुणो से रहित है। यहा यह बात ध्यान देने योग्य है कि जैसे धर्मादि द्रव्यो का आधार आकाश है उस तरह आकाश का अन्य कोई और आधार नही है क्योकि आकाश का अन्य आधार मानने मे उसका भी कोई आधार मानना पडेगा और फिर उसका भी, इस तरह अनवस्था दोष आ जायेगा। अत उसे स्वय ही अपना आधार मानना युक्तिसगत है। आचार्य कुन्दकुन्द के अनुसार आकाश दो भागो मे कल्पित किया गया है, लोकाकाश और अलोकाकाश। जीव, पुद्गल, धर्म-अधर्म और काल जहा ये पाचो द्रव्य रहते हैं वह लोकाकाश है और इससे परे अलोकाकाश (134)।

काल—जो जीवादि द्रव्यो के परिणमन मे सहायक है वह काल है (135)। जैसा कि ऊपर कहा गया है कि प्रत्येक द्रव्य परिणामी-नित्य है। इस

परिणमन की व्याख्या काल द्रव्य को स्वीकार किये विना नही हो सकती । काल द्रव्य किसी का वलपूर्वक परिणमन नही कराता, वह तो उन परिणमनशील पदार्थो के परिणमन मे सहायकमात्र होता है । जिस प्रकार शीत ऋतु मे स्वय अध्ययन-क्रिया करते हुए पुरुष को अग्नि सहकारी है और जिस प्रकार स्वय घूमने की क्रिया करते हुए कुम्हार के चाक को नीचे की कीली सहकारी है उसी प्रकार स्वय परिणमन करते हुए पदार्थो की परिणमन-क्रिया मे काल सहकारी है ।

काल के दो भेद है (137)-1 व्यवहार काल और 2 परमार्थ (द्रव्य) काल । सैकिड, मिनिट, घटा, दिन, महिने, वर्ष आदि व्यवहार काल है । यह क्षणभगुर और पराश्रित है । इसकी माप पुद्गल द्रव्य के परिणमन के विना नही हो सकती (136) । परमार्थ काल नित्य और स्वाश्रित है । परिवर्तन, एक स्थान से दूसरे स्थान मे गति, धीरे और शीघ्र, युवा और वृद्ध, नवीनता और प्राचीनता आदि व्यवहार विना व्यवहार काल के सभव नही हैं।

यहा यह वात ध्यान देने योग्य है कि द्रव्यो के स्वरूप को समझाने के साथ-साथ आचार्य कुन्दकुन्द का उद्देश्य मनुष्य को आध्यात्मिक विकास की चरम सीमा पर अग्रसर होने के लिए प्रेरित करना है जिससे वह तनावमुक्त जीवन जी सके । उनकी प्रेरणा है कि व्यक्ति स्व-चेतना की स्वतन्त्रता को जीये । यह स्वतन्त्रता का जीवन ही समता का जीवन है (104) । ऐसे व्यक्ति का सुख आत्मोत्पन्न, विषयातीत, अनुपम, अनन्त और अविच्छिन्न होता है (102) । ऐसा व्यक्ति ही परम शान्तिरूपी सुख को प्राप्त कर सकता है (103) ।

आचार्य कुन्दकुन्द का मानना है कि स्वतन्त्रता आत्मा का स्वभाव है । परतन्त्रता कारणो द्वारा थोपी हुई है । किन्तु व्यक्ति परतन्त्रता के कारणो को इतनी दृढता से पकडे हुए है कि परतन्त्रता स्वाभाविक प्रतीत होती है, किन्तु मानसिक तनाव की उत्पत्ति इस स्वाभाविकता के लिए चुनौती है । आत्मा को स्वतन्त्र समझने की दृष्टि निश्चयनय है और उसको परतन्त्र मानने की दृष्टि व्यवहारनय है । जव आत्मा की पर से स्वतन्त्रता स्वाभाविक है तो आत्मा की परतन्त्रता अस्वाभाविक होगी ही । इसीलिये कहा गया है कि निश्चयनय (शुद्ध नय) वास्तविक है और व्यवहारनय अवास्तविक है (45) । ठीक ही है जो दृष्टि स्वतन्त्रता का वोध कराए वह दृष्टि वास्तविक ही होगी और जो दृष्टि परतन्त्रता के आधार से निर्मित हो वह अवास्तविक ही रहेगी । आचार्य कुन्दकुन्द का कथन है कि जो दृष्टि आत्मा को स्थायी, अनुपम, कर्मो के वन्ध से रहित, रागादि से न छुआ हुआ तथा अन्य से अमिश्रित देखती है वह निश्चयनयात्मक

दृष्टि है (43)। इस तरह से निश्चयनय से आत्मा मे पुद्गल के कोई भी गुण नही हैं। अत आत्मा रसरहित, रूपरहित, गन्धरहित, तथा अदृश्यमान है, उसका स्वभाव चेतना है। उसका ग्रहण विना किसी चिह्न के (केवल अनुभव से) होता है और उसका आकार अप्रतिपादित है (44)।

आचार्य कुन्दकुन्द का कथन है कि व्यवहार नय के अनुसार आत्मा अनेक प्रकार के पुद्गल कर्मों को करता है तथा वह अनेक प्रकार के पुद्गल कर्मों के फलो को भोगता है (79) चूंकि व्यवहारनय चेतना की परतन्त्रता मे निर्मित दृष्टि है इसीलिए अज्ञानी कर्ता व्यवहारनय के आश्रय से चलता है। निश्चयनय के अनुसार आत्मा पुद्गल कर्मों को उत्पन्न नही करता है। चूंकि निश्चय-दृष्टि चेतना की स्वतन्त्रता पर आश्रित दृष्टि है, इसीलिए ज्ञानी कर्ता निश्चयनय के आश्रय से चलता है। सच तो यह है कि आत्मा जिस भाव को अपने मे उत्पन्न करता है वह उसका कर्ता होता है। ज्ञानी का यह भाव ज्ञानमय होता है और अज्ञानी का भाव अज्ञानमय होता है (75)। जैसे कनकमय वस्तु मे कनक कुण्डल आदि वस्तुए उत्पन्न होती हैं और लोहमय वस्तु मे लोह कडे आदि उत्पन्न होते है, वैसे ही अज्ञानी के अनेक प्रकार के अज्ञानमय भाव ही उत्पन्न होते हैं तथा ज्ञानी के सभी भाव ज्ञानमय होते है (76,77)।

आचार्य कुन्दकुन्द ने तीन प्रकार के भावो का (शुभ, अशुभ और शुद्ध) विश्लेषण करते हुए कहा है कि शुद्ध भाव ही ग्रहण किया जाना चाहिये, व्यक्ति की उच्चतम अवस्था इसी को ग्रहण करने मे उत्पन्न होती है। जिस व्यक्ति का जीवन विषय-कषायो मे डूबा हुआ है, जिसका जीवन दुष्ट सिद्धान्त, दुष्ट बुद्धि तथा दुष्टचर्या मे जुडा हुआ है, जिसके जीवन मे क्रूरता है तथा जो कुपथ मे लीन है, वह अशुभ-भाव को धारण करने वाला कहा जाता है (92) जो व्यक्ति जीवो पर दयावान है, देव, साधु तथा गुरु की भक्ति मे लीन है, जिसके जीवन मे अनुकम्पा है, जो भूखे-प्यासे तथा दुखी प्राणी को देखकर उसके साथ दयालुता से व्यवहार करता है वह शुभ-भाव वाला कहा गया है (91, 82, 84, 86)। जीव का शुभ-भाव ही पुण्य है, और अशुभ-भाव ही पाप है। आचार्य कुन्दकुन्द का कहना है कि जो व्यक्ति पाप से उत्पन्न मानसिक तनाव को समाप्त करता है तथा पुण्य क्रियाओ से उत्पन्न मानसिक तनाव को समाप्त करता है वही व्यक्ति शुद्ध भाव की भूमिका पर आरूढ होता है। ऐसा व्यक्ति ही शुद्धोपयोगी कहलाता है। वही व्यक्ति पूर्णतया समतावान होता है।

पूर्ण समतावान बनने के लिए चारित्र की साधना महत्वपूर्ण है। जो व्यक्ति निश्चयनय के आश्रय मे चलता है वही सम्यक्दृष्टि होता है (45) क्योकि

वही एक ऐसा व्यक्ति है जिसको आत्मा के स्वतन्त्र स्वभाव पर पूर्ण श्रद्धा है। सम्यक्दृष्टि के जीवन मे एक ऐसे झुकाव का उदय होता है जो उसे चारित्र की साधना करने के लिए प्रेरित करता है। आचार्य कुन्दकुन्द का कथन है कि जिस व्यक्ति मे रागादि भावो का अशमात्र भी विद्यमान है वह अभी तक स्वतन्त्रता के महत्व को नही समझा है (99)। जो व्यक्ति शुद्धात्मक तत्त्व से अपरिचित है और व्रतो और नियमो को धारण कर रहा है वह परम शान्ति को प्राप्त नही कर सकता है (95, 96)। जो व्यक्ति आत्मा के स्वभाव को समझता है वह आसक्ति से रहित होता हुआ आत्मा की स्वतन्त्रता का उपभोग करने लग जाता है। आसक्त व्यक्ति ही परतन्त्रता का जीवन जीता है (71)। यह निश्चित है कि वस्तु के सहारे मे ही मनुष्यो को आसक्तिपूर्ण विचार होता है, तो भी वास्तव मे वस्तु व्यक्ति को परतन्त्र नही बनाती है। व्यक्ति की परतन्त्रता तो वस्तु के प्रति आसक्ति से ही उत्पन्न होती है (70)। अत जो व्यक्ति आसक्तिरहित होता है वह कर्मो से छुटकारा पा जाता है, समतामय जीवन जीता है और शुद्धोपयोगी बन जाता है (71)।

यह कहा जा चुका है कि निश्चयनय चेतना की स्वतन्त्रता से उत्पन्न दृष्टि है और व्यवहार नय चेतना की परतन्त्रता से उत्पन्न दृष्टि है। ये दोनो ही दृष्टियाँ बौद्धिक है। किन्तु शुद्धात्मा का अनुभव नयातीत है, वह बुद्धि से परे है (47)। ऐसा अनुभव होने पर केवल ज्ञान का उदय होता है, वह व्यक्ति सभी इन्द्रियो की पराधीनता से दूर हो जाता है और उसमे एक ऐसे सुख का उदय होता है जो इन्द्रियातीत होता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि आचार्य कुन्दकुन्द ने द्रव्यो का विवेचन बहुत ही सूक्ष्मता से किया है। इसी विशेषता से प्रभावित होकर आचार्य कुन्दकुन्द के द्रव्य-विचार को पाठको के समक्ष प्रस्तुत करते हुए हर्ष का अनुभव हो रहा है। गाथाओ के हिन्दी अनुवाद को मूलानुगामी बनाने का प्रयास किया गया है। यह दृष्टि रही है कि अनुवाद पढने से ही शब्दो की विभक्तिया एव उनके अर्थ समझ मे आ जाए। अनुवाद को प्रवाहमय बनाने की भी इच्छा रही है। कहा तक सफलता मिली है, इसको तो पाठक ही बता सकेंगे। अनुवाद के अतिरिक्त गाथाओ का व्याकरणिक विश्लेषण भी प्रस्तुत किया गया है। इस विश्लेषण मे जिन सकेतो का प्रयोग किया गया है उनको सकेत-सूची मे देखकर समझा जा सकता है। यह आशा की जाती है कि इससे प्राकृत को व्यवस्थित रूप से सीखने मे सहायता मिलेगी तथा व्याकरण के विभिन्न नियम सहज मे ही सीखे जा सकेंगे।

यह सर्वविदित है कि किसी भी भाषा को सीखने के लिए व्याकरण का ज्ञान अत्यावश्यक है । प्रस्तुत गाथाए एव उनके व्याकरणिक विश्लेषण से व्याकरण के साथ-साथ शब्दो के प्रयोग भी सीखने मे मदद मिलेगी । शब्दो की व्याकरण और उनका अर्थपूर्ण प्रयोग दोनो ही भाषा सीखने के आधार होते है । अनुवाद एव व्याकरणिक विश्लेषण जैसा भी बन पाया है पाठको के समक्ष है । पाठको के सुझाव मेरे लिए बहुत ही काम के होगे ।

आभार

आचार्य कुन्दकुन्द द्रव्य-विचार पुस्तक को तैयार करने मे समयसार, प्रवचनसार, पचास्तिकाय, अष्टपाहुड, नियमसार के जिन सस्करणो का उपयोग किया गया है उनकी सूची अन्त मे दी गई है । इन सस्करणो के सम्पादको के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ ।

सुश्री प्रीति जैन, जैनविद्या संस्थान, ने इस पुस्तक के अनुवाद को पढकर उपयोगी सुझाव दिए तथा इसकी प्रस्तावना को रुचिपूर्वक पढा, इसके लिए आभार प्रकट करता हूँ ।

मेरी धर्मपत्नी श्रीमती कमलादेवी सोगाणी ने इस पुस्तक की गाथाओ के चयन मे जो सुझाव दिए उसके लिए अपना आभार व्यक्त करता हूँ ।

इस पुस्तक को प्रकाशित करने के लिए जैनविद्या सस्थान, श्रीमहावीरजी के सयोजक श्री ज्ञानचन्द्रजी खिन्दूका ने जो व्यवस्था की है उसके लिए उनके प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हू ।

एच-7, चितरजन मार्ग,
'सी'स्कीम, जयपुर-302001

कमलचन्द सोगाणी

आचार्य कुन्दकुन्द : द्रव्य-विचार

1. दव्वं सहावसिद्धं सदिति जिणा तच्चदो समक्खादो ।
सिद्धं तध आगमदो णेच्छदि जो सो हि परसमओ ।।

2. ण हवदि जदि सद्दव्वं असद्धुवं हवदि तं कधं दव्वं ।
हवदि पुणो अण्णं वा तम्हा दव्वं सयं सत्ता ।।

3 दव्वं जीवमजीवं जीवो पुण चेदणोवयोगमयो ।
पोग्गलदव्वप्पमुहं अचेदणं हवदि य अजीवं ।।

4. जाणदि पस्सदि सव्वं इच्छदि सुक्खं विभेदि दुक्खादो ।
कुव्वदि हिदमहिदं वा भुंजदि जीवो फलं तेसिं ।।

5 सुहदुक्खजाणणा वा हिदपरियम्मं च अहिदभीरुत्तं ।
जस्स ण विज्जदि णिच्चं तं समणा विंति अज्जीवं ।।

6. जीवा पोग्गलकाया, धम्माधम्मा य काल आयासं ।
तच्चत्था इदि भणिदा, णाणागुणपज्जयेहि संजुत्ता ।।

1. द्रव्य सत् (है)। (वह) इस विवरणवाला (है)। (ऐसा) स्वभाव से सिद्ध (है)। जितेन्द्रियो ने वास्तविक रूप से (ऐसा) कहा (है)। जो व्यक्ति आगम से स्थापित द्रव्य को ठीक इसी प्रकार स्वीकार नही करता है, वह निस्सन्देह असत्य दृष्टिवाला (है)।

2 यदि द्रव्य सत् नही होता है (तो) वह द्रव्य असत् होगा। अथवा (यदि) (द्रव्य) सत् से भिन्न होता है, (तो) (वह) (सत्तारहित) (द्रव्य) नित्य कैसे (होगा)? अत द्रव्य स्वय सत्ता (है)।

3 द्रव्य (दो प्रकार का है)—जीव और अजीव। जीव चेतन (है) (तथा) उपयोगमय (ज्ञान स्वभाववाला) (है)। इसके विपरीत अजीव अचेतन होता है (जिसके अन्तर्गत) पुद्गल द्रव्यसहित (अन्य द्रव्य है)।

4. जीव (तनावमुक्त अवस्था मे) सब को (केवल) देखता है, जानता है, (वह) (तनावयुक्त अवस्था मे) सुख चाहता है, दु ख से डरता है, उचित और अनुचित (कार्यों) को करता है तथा उनके फल को भोगता है।

5 जिसमे कभी भी सुख-दु ख का ज्ञान, हित का उत्पादन तथा अहित से भय वर्तमान नही होता है, उसको श्रमण अजीव कहते है।

6 अनेक जीव, पुद्गलो का समूह, धर्म, अधर्म, आकाश और काल-(ये) वास्तविक पदार्थ (द्रव्य) कहे गये (है)। (ये सभी) अनेक गुण और पर्यायो सहित (होते हैं)।

7. आगासकालजीवा धम्माधम्मा य मुत्तिपरिहीणा ।
मुत्तं पुग्गलदव्वं जीवो खलु चेदणो तेसु ॥

8. जे खलु इंदियगेज्झा विसया जीवेहिं होंति ते मुत्ता ।
सेसं हवदि अमुत्तं चित्तं उभयं समादियदि ॥

9. वण्णरसगंधफासा विज्जंते पुग्गलस्स सुहुमादो ।
पुढवीपरियंतस्स य सद्दो सो पोग्गलो चित्तो ॥

10-11. आगासस्सवगाहो धम्मद्दवस्स गमणहेदुत्तं ।
धम्मेदरदव्वस्स दु गुणो पुणो ठाणकारणदा ॥
कालस्स वट्टणा से गुणोवओगोत्ति अप्पणो भणिदो ।
णेया संखेवादो गुणा हि मुत्तिप्पहीणाणं ॥

12. आगासकालपुग्गलधम्माधम्मेसु णत्थि जीवगुणा ।
तेसिं अचेदणत्तं भणिदं जीवस्स चेदणदा ॥

13. जीवा पुग्गलकाया सह सक्किरिया हवंति ण य सेसा ।
पुग्गलकरणा जीवा खंधा खलु कालकरणा दु ॥

7 धर्म, अधर्म, आकाश, काल और जीव (द्रव्य) मूर्ति से रहित (अमूर्तिक) (होते है) । पुद्गल द्रव्य मूर्त (होता है) । उनमे जीव ही चेतन (कहा गया है) ।

8. जो पदार्थ जीवो द्वारा इन्द्रियो से ग्रहण किए जाने योग्य होते है, वे मूर्त (होते हैं) । शेष (पदार्थ-समूह) अमूर्त होता है । चित्त दोनो को भली प्रकार से समझता है ।

9 सूक्ष्म से पृथिवी तक फैले हुए पुद्गल मे (अति सूक्ष्म से अति स्थूल तक) (मूर्त गुण)—वर्ण, रस, गध और स्पर्श वर्तमान रहते है । (इसके अतिरिक्त) (जो) विभिन्न प्रकार का शब्द (है), वह भी पुद्गल है ।

10-11 (जो) स्थान (दिया जाता है), (वह) आकाश का गुण (है), (जो) गमन मे निमित्तता (है), (वह) धर्म द्रव्य का (गुण) (है), और जो स्थिति (ठहरने) मे कारणता (है), (वह) तो धर्म के विरोधी (अधर्म) द्रव्य का (गुण) (है), (जो) परिणमन (परिवर्तन) (होता है), (वह) काल (द्रव्य) का (गुण) (है), (जो) उपयोग (ज्ञान-चैतन्य) (है), (वह) आत्मा का गुण कहा गया (है) । (ये) गुण सक्षेप से मूर्तिरहित (अमूर्तिक) (द्रव्यो) के समझे जाने चाहिये ।

12 पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल मे जीव के गुण नही (रहते है), (क्योकि) उनमे अचेतनता कही गई (है) । (उनके विपरीत) जीव मे चेतनता (मानी गई है) ।

13 जीव (और) पुद्गलराशि (दोनो) साथ-साथ क्रियासहित होते है । किन्तु शेप (धर्म, अधर्म, आकाश और काल) क्रियासहित नही (होते हैं) । पुद्गल के निमित्त से जीव क्रियासहित (होते हैं) । और काल के निमित्त से (पुद्गल) स्कन्ध क्रियावान (होते हैं) ।

14. एदे छद्दव्वाणि य, कालं मोत्तूण अत्थिकायत्ति ।
णिद्दिट्ठा जिणसमये, काया हु बहुप्पदेसत्तं ॥

15- संखेज्जासंखेज्जा-णंतपदेसा हवंति मुत्तस्स ।
16. धम्माधम्मस्स पुणो, जीवस्स असंखदेसा हु ॥
लोयायासे ताव, इदरस्स अणंतयं हवे देसा ।
कालस्स ण कायत्तं, एगपदेसो हवे-जम्हा ॥

17. आगासमणुणिविट्ठं आगासपदेससण्णया भणिदं ।
सव्वेसिं च अणूणं सक्कदि तं देदुमवकासं ॥

18. जस्स ण संति पदेसा पदेसमेत्तं व तच्चदो णादु ।
सुण्णं जाण तमत्थं अत्थंतरभूदमत्थीदो ॥

19. अण्णोण्णं पविसंता दिंता ओगासमण्णमण्णस्स ।
मेलंता वि य णिच्चं सगं सभावं ण विजहंति ॥

20. जीवोत्ति हवदि चेदा उपओगविसेसिदो पहू कत्ता ।
भोत्ता य देहमत्तो ण हि मुत्तो कम्मसंजुत्तो ॥

21. पाणेहिं चदुहि जीवदि जीवस्सदि जो हु जीविदो पुव्वं ।
सो जीवो पाणा पुण बलमिंदियमाउ उस्सासो ॥

14 जिन-सिद्धान्त मे ये छ द्रव्य (हैं)। (उनमे से) काल को छोडकर (शेष) अस्तिकाय कहे गये (हैं)। (जो) बहुप्रदेशपना (है), (वह) ही 'काय' (समझा जाना चाहिए)।

15-16 मूर्त (पुद्गल) (द्रव्य) के ससख्येय, असख्येय तथा अनन्त प्रदेश होते हैं। धर्म के, अधर्म के तथा जीव के असख्य प्रदेश (होते हैं)। लोकाकाश मे (भी) इतने ही प्रदेश (है), विरोधी (अलोकाकाश) मे अनन्त प्रदेश होते है। काल के कायता नही है, क्योकि (उसके) एकप्रदेश (ही) होता है।

17 ('प्रदेश' की धारणा को समझाने के लिए कहा गया है कि) (जहाँ) आकाश मे (एक) अणु स्थित कहा गया (है), (वहाँ) आकाश का एक प्रदेश (है)। (वह उतना आकाश) (प्रदेश) नाम के द्वारा (कहा जाता है)। वह (आकाश का एक प्रदेश) सभी अणुओ को स्थान देने के लिए समर्थ होता है।

18 जिसके प्रदेश नही है (या) (जिसके) वस्तुत प्रदेश मात्र भी जानने के लिए (वर्तमान नही है), वह द्रव्य अस्तित्व से विपरीत हुआ है, (इसलिए) (तुम) (उसको) शून्य समझो।

19 यद्यपि (सभी) (द्रव्य) एक दूसरे मे प्रवेश करते हुए (स्थित है), एक दूसरे को स्थान देते हुए (विद्यमान हैं), तथा (एक दूसरे से) सदैव सम्पर्क करते हुए (रहते हैं) (तो) (भी) (वे) निज स्वभाव को नही छोडते है।

20 जीव चेतनामय होता है, (वह) ज्ञान-गुण की विशेषता लिए हुए (रहता है), (अपने विकास मे) समर्थ (होता है,) (शुभ-अशुभ क्रियाओ का) कर्त्ता तथा (सुख-दु ख का) भोक्ता (होता है), देह जितना (रहता है), इन्द्रियो द्वारा उसका कभी भी ग्रहण नही (होता है) तथा (वह) (शुभ-अशुभ) कर्मों से युक्त (रहता है)।

21 जो निस्सन्देह चार प्राणो से जीता है, जीवेगा, तथा विगत काल मे जिया (है), वह जीव (कहा गया है)। और (वे) चार प्राण (है)- बल, इन्द्रिय, आयु और श्वास (साँस)।

22 जीवा संसारत्था णिव्वादा चेदणप्पगा दुविहा ।
उवओगलक्खणा वि य देहादेहप्पवीचारा ।।

23 एदे सव्वे भावा, ववहारणयं पडुच्च भणिदा हु ।
सव्वे सिद्धसहावा, सुद्धणया संसिदी जीवा ।।

24. अप्पा परिणामप्पा परिणामो णाणकम्मफलभावी ।
तम्हा णाणं कम्मं फलं च आदा मुणेदव्वो ।।

25. कम्माणं फलमेक्को एक्को कज्जं तु णाणमध एक्को ।
चेदयदि जीवरासी चेदगभावेण तिविहेण ।।

26. परिणमदि चेयणाए आदा पुण चेदणा तिधाभिमदा ।
सा पुण णाणे कम्मे फलम्मि वा कम्मणो भणिदा ।।

27 णाणं अत्थवियप्पो कम्मं जीवेण जं समारद्धं ।
तमणेगविधं भणिदं फलत्ति सोक्खं व दुक्खं वा ।।

22 जीव दो प्रकार के (है)– ससार (मानसिक तनाव) मे स्थित और ससार (मानसिक तनाव) से मुक्त। (वे) (सभी) चेतना-स्वरूपवाले और ज्ञान-स्वभाववाले (होते हैं)। तथा (वे) देहसहित और देहरहित भेदवाले भी (कहे गये है)।

23 (ससारी जीवों के) ये सभी भाव (जन्म-मरणादि) व्यवहारनय को अपेक्षा करके कहे गये (है)। सचमुच शुद्धनय से ससार-चक्र (ग्रहण किए हुए) सभी जीव सिद्धस्वरूप (लिए हुए होते है)।

24 आत्मा परिणाम-स्वभाववाला (कहा गया है)। परिणाम ज्ञान–(चेतना), प्रयोजन–(चेतना) तथा (कर्म)–फल–(चेतना) के रूप मे होनेवाला (वताया गया है)। इसलिए (जहाँ) ज्ञान-(चेतना) प्रयोजन–(चेतना) व (कर्म)–फल–(चेतना) है, वहाँ आत्मा समझी जानी चाहिए।

25 कुछ जीव कर्म के (सुख-दु खात्मक) फल को, कुछ (शुभ-अशुभ) प्रयोजन को तथा कुछ ज्ञान को (अनुभव करते है)। (इस प्रकार) जीव-समूह तीन प्रकार के सचेतन परिणमन से (ज्ञान, प्रयोजन और कर्म-फल को) अनुभव करता है।

26. आत्मा चेतनारूप मे रूपान्तरित होती है, तथा चेतना तीन प्रकार से (रूपान्तरित) मानी गई है। फिर वह (चेतना) ज्ञान मे, प्रयोजन मे, तथा कर्म के फल मे (रूपान्तरित) कही गई (है)।

27. पदार्थ का विचार (जानना) ज्ञान-(चेतना) (है)। जीव के द्वारा जो (शुभ-अशुभ प्रयोजन) धारा गया (है), वह कर्म–(चेतना) (है)। वह (प्रयोजन-चेतना) अनेक प्रकार की कही गई (है)। तथा (जो) सुख अथवा दु ख (अनुभव होता है), (वह) (कर्म)–फल–(चेतना) (है)।

28. सव्वे खलु कम्मफलं थावरकाया तसा हि कज्जजुदं ।
पाणित्तमदिक्कंता णाणं विंदति ते जीवा ।।

29 एदे जीवणिकाया पंचविहा पुढविकाइयादीया ।
मणपरिणामविरहिदा जीवा एगेंदिया भणिया ।।

30. अंडेसु पवड्ढंता गब्भत्था माणुसा य मुच्छगया ।
जारिसया तारिसया जीवा एगेंदिया णेया ।।

31. संवुक्कमादुवाहा संखा सिप्पी अपादगा य किमी ।
जाणति रस फासं जे ते बेइंदिया जीवाः ।।

32. जूगागुभीमक्कणपिपीलिया विच्छियादिया कीडा ।
जाणंति रसं फासं गधं तेइंदिया जीवा ।।

33 उद्दंसमसयमक्खियमधुकरभमरा पतगमादीया ।
रूपं रसं च गंधं फासं पुण ते विजाणंति ।।

34. सुरणरणारयतिरिया वण्णरसप्फासगंधसद्दणहू ।
जलचरथलचरखचरा बलिया पचेंदिया जीवा ।।

28 वे सभी जीव (जो) स्थावरकाय* (है) कर्म के (सुख-दु खात्मक) फल को अनुभव करते है। (वे) (सभी) (जीव) (जो) त्रस** (है) (शुभ-अशुभ) प्रयोजन से मिली हुई (चेतना) को (अनुभव करते है) (तथा) (वे) (सभी) (जीव) (जो) प्राणित्व को पार किए हुए (है), ज्ञान का (अनुभव करते है)।

* पृथ्वीकायिक, जलकायिक तथा वनस्पतिकायिक जीव (पञ्चास्तिकाय, 111)

** अग्निकायिक तथा वायुकायिक (एकेन्द्रिय जीव), द्वि-इन्द्रिय से पचेन्द्रिय तक के जीव (पञ्चास्तिकाय, 112–117)

29 ये पृथिवीकायिकादि पाँच प्रकार के जीवसमूह मन के प्रभाव से रहित (होते है)। (ये) जीव एक इन्द्रियवाले कहे गये (है)।

30. जिस प्रकार अण्डो मे वढते हुए जीव (होते है) एव गर्भ मे स्थित तथा वेहोश मनुष्य (होते है), उसी प्रकार एक (स्पर्शन) इन्द्रियवाले जीव समझे जाने चाहिए।

31 शवूक, मातृवाह (क्षुद्र जन्तु विशेष), शङ्ख, सीप और विना पैरवाले कीट जो स्पर्श और रस को जानते है, वे दो इन्द्रियवाले जीव (हैं)।

32 जूं, कुम्भी (एक प्रकार का जहरीला कीट), खटमल, चीटी, विच्छू आदि कीडे तीन इन्द्रियवाले जीव (है)। (वे) स्पर्श, रस और गन्ध को जानते है।

33 मच्छर, डास, मक्खी, मधुमक्खी, भौंरा, पतगा आदि (जीव) स्पर्श, रस, गन्ध और रूप को जानते है। अत वे (चार इन्द्रियवाले जीव है)।

34 देव, मनुष्य, नारकी और तिर्यञ्च वर्ण, रस, स्पर्श, गन्ध और शब्द के जाननेवाले (होते है)। (ये) पचेन्द्रिय गतिशील जीव जल मे गमन करनेवाले, स्थल पर गमन करनेवाले और आकाश मे गमन करनेवाले होते है।

35. जह पउमरायरयणं खित्तं खीरं पभासयदि खीरं ।
तह देही देहत्थो सदेहमत्तं पभासयदि ॥

36-37-38.

जो खलु संसारत्थो जीवो तत्तो दु होदि परिणामो ।
परिणामादो कम्मं कम्मादो होदि गदिसु गदी ॥
गदिमधिगदस्स देहो देहादो इंदियाणि जायंते ।
तेहिं दु विसयग्गहणं तत्तो रागो वा दोसो वा ॥
जायदि जीवस्सेवं भावो संसारचक्कवालम्मि ।
इदि जिणवरेहिं भणिदो अणादिणिधणो सणिधणो वा ॥

39 जेसिं विसयेसु रदी तेसिं दुक्खं वियाण सब्भावं ।
जदि तं ण हि सब्भावं वावारो णत्थि विसयत्थं ॥

40. तिपयारो सो अप्पा परब्भितरबाहिरो हु हेऊण ।
तत्थ परो झाइज्जइ अंतोवायेण चयहि बहिरप्पा ॥

41 अक्खाणि बाहिरप्पा अंतरअप्पा हु अप्पसंकप्पो ।
कम्मकलंकविमुक्को परमप्पा भण्णए देवो ॥

35 जिस प्रकार दूध मे डाला हुआ पद्मराग रत्न दूध को प्रकाशित करता है, उसी प्रकार देह मे स्थित आत्मा स्वदेहमात्र को प्रकाशित करता है।

36-37-38

जो जीव सचमुच ससार (मानसिक तनाव) मे स्थित (होता है), (उसमे) उस कारण से ही (अशुद्ध) भाव (समूह) उत्पन्न होता है। (अशुद्ध) भाव (समूह) से कर्म (उत्पन्न होता है) और कर्म से गतियो मे गमन होता है।

(किसी भी) गति मे गये हुए जीव से देह (उत्पन्न होता है), देह से इन्द्रियाँ उत्पन्न होती है। उनके (इन्द्रियो के) द्वारा ही विषयो का ग्रहण (होता है)। (और) उस कारण से (जीव मे) राग और द्वेष (उत्पन्न होता है)।

इस प्रकार जीव के आवागमन के समय (उसमे) मनोभाव (समूह) उत्पन्न होता है (जो) या (तो) आदि और अन्तरहित (होता है) या अन्त-सहित होता है। यह अर्हन्तो द्वारा कहा गया है।

39 जिन (व्यक्तियो) के (जीवन मे) (इन्द्रिय) विषयो मे रस है, उनके (जीवन मे) दु ख (मानसिक तनाव) (एक) वास्तविकता (है)। (इस वात को) (तुम) समझो, क्योकि यदि वह (दु ख) वास्तविकता न (होता), (तो) (इन्द्रिय) विषयो के लिए प्रवृत्ति (वार-वार) न (होती)।

40 निस्सन्देह (भिन्न-भिन्न) कारणो से वह आत्मा तीन प्रकार का है—परम (आत्मा), आन्तरिक (आत्मा) और वहिर (आत्मा)। (तुम) वहिरात्मा को छोडो, (चूंकि) उस (परम) अवस्था मे आतरिक (आत्मा) के साधन से परम (आत्मा) ध्याया जाता है।

41 (जो व्यक्ति यह मानता है कि) इन्द्रियाँ (ही) (परम सत्य है), (वह) वहिरात्मा (है), (जिस व्यक्ति मे) (शरीर से भिन्न) आत्मा की विचारणा विना किसी सन्देह के है, (वह) अन्तरात्मा (है) (तथा) कर्म-कलक से मुक्त (जीव) परम आत्मा (है)। (परम आत्मा) (ही) देव कहा गया (है)।

42 आरुहवि अंतरप्पा बहिरप्पा छंडिऊण तिविहेण ।
झाइज्जइ परमप्पा उवइट्ठं जिणवरिंदेहिं ॥

43. जो पस्सदि अप्पाणं अबद्धपुट्ठं अणण्णयं णियदं ।
अविसेसमसंजुत्तं तं सुद्धणयं वियाणाहि ॥

44. अरसमरूवमगंधं अव्वत्तं चेयणागुणमसद्दं ।
जाणमलिंगग्गहणं जीवमणिद्दिट्ठसंठाणं ॥

45. ववहारोऽभूदत्थो भूदत्थो देसिदो दु सुद्धणओ ।
भूदत्थ मस्सिदो खलु सम्मादिट्ठी हवदि जीवो ॥

46 जीवे कम्मं बद्धं पुट्ठं चेदि ववहारणयभणिदं ।
सुद्धणयस्स दु जीवे अबद्धपुट्ठं हवदि कम्मं ॥

47. कम्मं बद्धमबद्धं जीवे एदं तु जाण णयपक्खं ।
णयपक्खातिक्कंतो भण्णदि जो सो समयसारो ॥

48 जीवो ववगदमोहो उवलद्धो तच्चमप्पणो सम्मं ।
जहदि जदि रागदोसे सो अप्पाणं लहदि सुद्धं ॥

42. अरहंतो द्वारा (यह) कहा गया (है) कि (साधकों द्वारा) तीन प्रकार (मन, वचन, काय) से बहिरात्मा को छोड़कर और अन्तरात्मा को ग्रहण करके परमात्मा (परम आत्मा) ध्याया जाता है।

43 जो (नय) आत्मा को स्थायी, अद्वितीय, (कर्मों के) बन्ध से रहित (रागादि से) न छुआ हुआ, (अतरग) भेद से रहित, (तथा) (अन्य से) अमिश्रित देखता है, उसको (तुम) शुद्धनय जानो।

44. आत्मा रसरहित, रूपरहित, गधरहित, शब्दरहित तथा अदृश्यमान (है), (उसका) स्वभाव चेतना तथा ज्ञान (है), (उसका) ग्रहण बिना किसी चिह्न के (केवल अनुभव से) (होता है) (और) (उसका) आकार अप्रतिपादित (है)।

45 (जीवन मे महत्वपूर्ण होते हुए भी) व्यवहार (नय) अवास्तविक है (और) (अध्यात्म मार्ग मे) शुद्धनय ही वास्तविक कहा गया (है)। वास्तविकता पर आश्रित जीव ही सम्यग्दृष्टि होता है।

46 जीव के द्वारा कर्म बाधा हुआ (है) और पकडा हुआ (है)–इस प्रकार (यह) व्यवहारनय के द्वारा कहा गया है, किन्तु शुद्धनय के (अनुसार) जीव के द्वारा कर्म न बाधा हुआ (और) न पकडा हुआ होता है।

47 जीव के द्वारा कर्म बाधा गया (है) और नही बाधा गया (है)– इसको तो तुम नय की दृष्टि जानो, किन्तु जो नय की दृष्टि से अतीत (है), वह समयसार (शुद्धात्मा) कहा गया (है)।

48 (जिस व्यक्ति के द्वारा) मोह (आध्यात्मिक विस्मरण) समाप्त किया गया (है), (उस) व्यक्ति ने पूर्णत आत्मा के सार को प्राप्त किया (है)। यदि वह राग-द्वेष (आसक्ति) को छोड देता है, (तो) (वह) अपने शुद्ध स्वरूप को प्राप्त कर लेगा।

49. जो एवं जाणित्ता झादि परं अप्पगं विसुद्धप्पा ।
सागाराणागारो खवेदि सो मोहदुग्गंठिं ॥

50. णाहं होमि परेसिं ण मे परे सन्ति णाणमहमेक्को ।
इदि जो झायदि झाणे सो अप्पाणं हवदि झादा ॥

51. देहा वा दविणा वा सुहदुक्खा वाऽध सत्तुमित्तजणा ।
जीवस्स ण संति धुवा धुवोवओगप्पगो अप्पा ॥

52. एवं णाणप्पाणं दंसणभूदं अदिंदियमहत्थं ।
धुवमचलमणालंबं मण्णेऽहं अप्पगं सुद्धं ॥

53. आदा णाणपमाणं णाणं णेयप्पमाणमुद्दिट्ठं ।
णेयं लोगालोगं तम्हा णाणं तु सव्वगयं ॥

54. णाणं अप्पत्ति मदं वट्टदि णाणं विणा ण अप्पाणं ।
तम्हा णाणं अप्पा अप्पा णाणं व अण्णं वा ॥

55. जो जाणदि सो णाणं ण हवदि णाणेण जाणगो आदा ।
णाणं परिणमदि सयं अट्ठा णाणट्ठिया सव्वे ॥

56. तिक्कालणिच्चविसमं सयलं सव्वत्थ संभवं चित्तं ।
जुगवं जाणदि जोण्हं अहो हि णाणस्स माहप्पं ॥

49 जो गृहस्थ (तथा) मुनि इस प्रकार समझकर उच्चतम आत्मा का ध्यान करता है, वह मोह की जटिल गाँठ को नष्ट कर देता है (और) (वह) शुद्धात्मा (हो जाता है)।

50 मै पर (द्रव्यो) के (अधीन) नही हूँ। पर (द्रव्य) मेरे (अधीन) नही है। मैं (तो) केवल मात्र ज्ञान (हूँ)। इस प्रकार जो ध्यान मे आत्मा को ध्याता है, वह (वास्तविक) ध्याता होता है।

51 अच्छा तो, (यह समझा जाना चाहिए कि) व्यक्ति के (जीवन मे) (स्थूल एव सूक्ष्म) शरीर, धनादि वस्तुएँ, सुख और दु ख, शत्रुजन एव मित्रजन स्थायी नही रहते है। (केवल) उपयोगमयी (चेतना-ज्ञान स्वभाववाली) आत्मा (ही) स्थायी (होती है)।

52 इस प्रकार मै (कुन्दकुन्द) आत्मा को ज्ञानस्वभाववाला, दर्शनमयी, अतीन्द्रिय, श्रेष्ठ पदार्थ, स्थायी, स्थिर, आलबनरहित तथा शुद्ध समझता हूँ।

53 आत्मा ज्ञान जितना (है)। ज्ञान ज्ञेय (जानने योग्य पदार्थ) जितना कहा गया (है)। ज्ञेय (जानने योग्य पदार्थ) लोक और अलोक (है)। इसलिए ज्ञान तो सब जगह विद्यमान (रहता है)।

54 आत्मा ज्ञान (है)। आत्मा के बिना ज्ञान नही होता है। इस प्रकार (यह) (जिनमत मे) स्वीकृत (है)। इसलिए आत्मा ज्ञान (है), ज्ञान आत्मा (है) तथा (आत्मा) अन्य गुणरूप भी (होता है)।

55 जो जानता है, वह ज्ञान (है)। ज्ञान के द्वारा आत्मा जाननेवाला नही होता है। (जानने मे) ज्ञान स्वय रूपान्तरित होता है। सब पदार्थ ज्ञान मे स्थित (रहते है)।

56 (केवल ज्ञान का) प्रकाश तीनो कालो मे अविनाशी तथा अनुपम (होता है)। (वह) सम्पूर्ण (लोक) को तथा (उसकी) विविध सभावनाओ को हर समय एक साथ जानता है। हे मनुष्यो! निश्चयपूर्वक (यह) (केवल) ज्ञान की महिमा (है)।

57. णत्थि परोक्खं किंचिवि समंत सव्वक्खगुणसमिद्धस्स ।
अक्खातीदस्स सदा सयमेव हि णाणजादस्स ।।

58. गेण्हदि णेव ण मुंचदि ण परं परिणमदि केवली भगवं ।
पेच्छदि समंतदो सो जाणदि सव्वं णिरवसेसं ।।

59. सोक्खं वा पुण दुक्खं केवलणाणिस्स णत्थि देहगदं ।
जम्हा अदिंदियत्तं जादं तम्हा दु तं णेयं ।।

60. अत्थि अमुत्तं मुत्तं अदिंदियं इंदियं च अत्थेसु ।
णाणं च तधा सोक्खं जं तेसु परं च तं णेयं ।।

61. जं केवलत्ति णाण तं सोक्खं परिणमं च सो चेव ।
खेदो तस्स ण भणिदो जम्हा घादी खयं जादा ।।

62. जादं सयं समत्तं णाणमणंतत्थवित्थिदं विमलं ।
रहिदं तु उग्गहादिहि सुहत्ति एयंतियं भणिदं ।।

63. जादो सयं स चेदा सव्वण्हू सव्वलोगदरसी य ।
पप्पोदि सुहमणंतं अव्वावाधं सगममुत्तं ।।

57 निस्सदेह स्वय ही (केवल/दिव्य) ज्ञान को प्राप्त (व्यक्ति) के लिए सदा इन्द्रियो (की अधीनता) से परे पहुँचे हुए ज्ञान के लिए, सब ओर से सव इन्द्रियो के गुणो मे (एक साथ) सम्पन्न व्यक्ति के लिए कुछ भी परोक्ष नही है।

58 केवली भगवान् पर (वस्तु) को न ग्रहण करते है (और) न ही छोडते है। वे सव ओर से (तथा) पूर्णरूप से सब को जानते है। (किन्तु) (इस कारण से) (वे) (स्वय) रूपान्तरित नही होते है।

59. चूकि केवलज्ञानी (शुद्धोपयोगी) के अतीन्द्रियता उत्पन्न हुई (है), इसलिए ही (उसके जीवन मे) शरीर के द्वारा प्राप्त सुख अथवा दु ख (विद्यमान) नही (होता है)। वह (बात) (वास्तव मे) समझने योग्य (है)।

60 पदार्थों के विपय मे अतीन्द्रिय ज्ञान मूर्च्छारहित (होता है) तथा इन्द्रिय-ज्ञान मूर्च्छा-युक्त (होता है) और इसी तरह (अतीन्द्रिय-इन्द्रिय) सुख (भी) (क्रमश) (मूर्च्छारहित तथा मूर्च्छायुक्त) (होता है)।

61 जो केवलज्ञान (दिव्यज्ञान) (है), वह सुख (है)। (और) निस्सन्देह (केवलज्ञान के रूप मे) वह रूपान्तरण (सुख) ही है। उसके (केवलज्ञानी के/शुद्धोपयोगी के) (जीवन मे) खेद (मानसिक तनाव) नही कहा गया (है), चूकि (उसके) घातिया (मानसिक तनाव उत्पन्न करनेवाले) (कर्म) क्षय को प्राप्त हुए (है)।

62 जो ज्ञान पूर्ण (है), शुद्ध (है), आप से आप उत्पन्न हुआ (है), अनन्त पदार्थों मे फैला हुआ (है) और अवग्रह आदि (की सीमाओ) से रहित है, (वह) अद्वितीय सुख कहा गया (है)।

63 हे मनुष्य ! (तू समझ कि) जो व्यक्ति स्वय जिन (हुआ है) और सव लोक को (तथ्यात्मक और मूल्यात्मक रूप से) देखनेवाला (भी) हुआ (है), वह अनन्त, बाधारहित, निजी (आत्मा से उत्पन्न) (तथा) इन्द्रियातीत सुख को प्राप्त करता है।

64. तिमिरहरा जइ दिट्ठी जणस्स दीवेण णत्थि कादव्वं ।
तध सोक्खं सयमादा विसया किं तत्थ कुव्वंति ।।

65. सयमेव जधादिच्चो तेजो उण्हो य देवदा णभसि ।
सिद्धोवि तधा णाणं सुहं च लोगे तधा देवो ।।

66. परिणमदि जदा अप्पा सुहम्मि असुहम्मि रागदोसजुदो ।
तं पविसदि कम्मरयं णाणावरणादिभावेहिं ।।

67. जं कुणदि भावमादा कत्ता सो होदि तस्स भावस्स ।
कम्मत्तं परिणमदे तम्हि सयं पोग्गलं दव्वं ।।

68. अण्णाणी पुण रत्तो हि सव्वदव्वेसु कम्ममज्झगदो ।
लिप्पदि कम्मरयेण दु कद्दममज्झे जहा लोहं ।

69. आदा कम्ममलिमसो धारदि पाणे पुणो पुणो अण्णे ।
ण जहदि जाव ममत्तं देहपधाणेसु विसएसु ।।

70. वत्थु पडुच्च तं पुण अज्झवसाणं तु होदि जीवाणं ।
ण हि वत्थुदो दु बंधो अज्झवसाणेण बंधो त्ति ।।

64 यदि मनुष्य की आँख (स्वयं) (वस्तुओ के प्रति) अन्धेपन को हटाने वाली (है), (तो) दीपक के द्वारा (कुछ भी) किये जाने योग्य नही (रहता है)। उसी प्रकार (जब) स्वय आत्मा ही सुख (है), (तो) वहा पर (इन्द्रियो के) विषय क्या प्रयोजन (सिद्ध) करेगे ?

65 जिस प्रकार सूर्य स्वय ही प्रकाश (है), उष्ण (है), तथा आकाश मे (एक) दिव्यशक्ति (है), उसी प्रकार सिद्ध (पूर्ण आत्मा) भी ज्ञान और सुख (है) तथा लोक मे दिव्य (होते है)।

66 जब आत्मा राग-द्वेष से जकडा हुआ शुभ और अशुभ (भाव) मे रूपान्तरित होता है, (तो) ज्ञानावरणादिरूप परिणामो द्वारा कर्म-रज उसमे (आत्मा मे) प्रवेश करता है।

67 आत्मा जिस भाव को उत्पन्न करता है, वह उस भाव का कर्ता होता है। उसके (कर्ता) होने पर पुद्गल द्रव्य अपने आप कर्मत्व को प्राप्त करता है।

68. और निस्सन्देह अज्ञानी सब वस्तुओ मे आसक्त (होता) है। अत. कर्म के मध्य मे फँसा हुआ कर्मरूपी रज से मलिन किया जाता है, जिस प्रकार कीचड मे (पडा हुआ) लोहा (मलिन किया जाता है)।

69 जब तक (आत्मा) (उन) (इन्द्रिय)-विषयो मे (जिनके) मूल मे शरीर (रहता है) ममत्व को नही छोडती है, (तब तक) आत्मा कर्मों से मलिन (रहती है) और बार-बार नवीन प्राणो को धारण करती है।

70 फिर वस्तु को आश्रय करके निस्सन्देह जीवो के (आसक्तिपूर्ण) विचार होता है, तो भी वास्तव मे वस्तु से बंध नही (होता है)। अत (आसक्तिपूर्ण) विचार से ही बन्ध (होता है)।

71. रत्तो बंधदि कम्मं मुच्चदि कम्मेहिं रागरहिदप्पा ।
एसो बंधसमासो जीवाणं जाण णिच्छयदो ।।

72. जो इंदियादिविजई भवीय उवओगमप्पगं झादि ।
कम्मेहिं सो ण रंजदि किह् तं पाणा अणुचरंति ।।

73. परिणमदि णेयमट्ठं णादा जदि णेव खाइगं तस्स ।
णाणंत्ति तं जिणिदा खवयंतं कम्ममेवुत्ता ।।

74. जं भावं सुहमसुहं करेदि आदा स तस्स खलु कत्ता ।
तं तस्स होदि कम्मं सो तस्स दु वेदगो अप्पा ।।

75. जं कुणदि भावमादा कत्ता सो होदि तस्स कम्मस्स ।
णाणिस्स दु णाणमओ अण्णाणमओ अणाणिस्स ।।

76-77.
कणयमया भावादो जायंते कुंडलादयो भावा ।
अयमयया भावादो जह जायंते दु कडयादी ।।
अण्णाणमया भावा अणाणिणो बहुविहा वि जायंते ।
णाणिस्स दु णाणमया सव्वे भावा तहा होंति ।

78. णिच्छयणयस्स एवं आदा अप्पाणमेव हि करेदि ।
वेदयदि पुणो तं चेव जाण अत्ता दु अत्ताणं ।।

71 आसक्त (व्यक्ति) कर्मो को बाँधता है, आसक्ति से रहित व्यक्ति कर्मो से छुटकारा पा जाता हे। निस्सन्देह यह जीवो के (कर्म) वध का सक्षेप है। (तुम) (इसे) समझो।

72 जो (व्यक्ति) इन्द्रियादि का विजेता होकर उपयोगमयी (ज्ञानमयी) आत्मा को ध्याता हे, वह कर्मो के द्वारा नही रगा जाता है। (तो) प्राण उसका अनुसरण कैसे करेगे ?

73 यदि ज्ञाता ज्ञेय (जानने योग्य पदार्थ) मे कभी रूपान्तरित नही होता है, (तो) उसका ज्ञान कर्मों के क्षय से उत्पन्न (समझा जाना चाहिए)। इसलिए जिनेन्द्रो ने उसे ही कर्मों को क्षय करता हुआ (व्यक्ति) कहा (है)।

74 आत्मा जिस शुभ-अशुभ भाव को करता है, वह उसका निस्सदेह कर्ता होता है, वह (भाव) उसका कर्म होता है, (तथा) वह आत्मा ही उसका भोक्ता होता है।

75 आत्मा जिस भाव को (अपने मे) उत्पन्न करता है, वह उस (भाव) कर्म का कर्ता होता है। ज्ञानी का (यह भाव) ज्ञानमय (होता है) और अज्ञानी का (यह भाव) अज्ञानमय होता है।

76-77

जैसे कनकमय वस्तु से कुण्डल आदि वस्तुएँ उत्पन्न होती है (बनती है) और लोहमय वस्तु से कडे आदि उत्पन्न होते है (बनते है), वैसे ही अज्ञानी के अनेक प्रकार के अज्ञानमय भाव ही उत्पन्न होते है तथा ज्ञानी के सभी भाव ज्ञानमय होते है।

78 निश्चयनय के (अनुसार) इस प्रकार (कहा गया है कि) आत्मा आत्मा (अपने भावो) को ही करता है तथा आत्मा आत्मा (अपने भावो) को ही भोगता है, उसको ही (तुम) जानो।

79. ववहारस्स दु आदा पोग्गलकम्मं करेदि णेयविहं।
तं चेव य वेदयदे पोग्गलकम्मं अणेयविहं ॥

80. अप्पा उवओगप्पा उवओगो णाणदंसणं भणिदो।
सो हि सुहो असुहो वा उवओगो अप्पणो हवदि ॥

81. जदि सो सुहो व असुहो ण हवदि आदा सयं सहावेण।
संसारोवि ण विज्जदि सव्वेसि जीवकायाणं ॥

82. देवदजदिगुरुपूजासु चेव दाणम्मि वा सुसीलेसु।
उववासादिसु रत्तो सुहोवओगप्पगो अप्पा ॥

83. सुहपरिणामो पुण्णं असुहो पावंति हवदि जीवस्स।
दोण्हं पोग्गलमेत्तो भावो कम्मत्तणं पत्तो ॥

84. रागो जस्स पसत्थो अणुकंपासंसिदो य परिणामो।
चित्तम्हि णत्थि कलुसं पुण्णं जीवस्स आसवदि ॥

85. अरहंतसिद्धसाहुसु भत्ती धम्मम्मि जा य खलु चेट्ठा।
अणुगमणं पि गुरूणं पसत्थरागो त्ति वुच्चंति ॥

86. तिसिदं बुभुक्खिदं वा दुहिदं दट्ठूण जो दु दुहिदमणो।
पडिवज्जदि तं किवया तस्सेसा होदि अणुकंपा ॥

79 किन्तु व्यवहारनय के (अनुसार) आत्मा अनेक प्रकार के पुद्‍गल कर्मों को करता है (तथा) उस अनेक प्रकार के पुद्‍गल कर्म को ही भोगता है।

80 आत्मा उपयोग-स्वभाववाला (है)। उपयोग ज्ञान-दर्शन कहा गया (है) और आत्मा का वह उपयोग शुभ अथवा अशुभ होता है।

81 यदि वह आत्मा स्वय अपने भाव (स्व-सकल्प) से शुभ रूप अथवा अशुभ रूप नही होवे, (तो) किसी भी जीव के ससार (मानसिक तनाव/अशाति) ही न होवे।

82 देव, साधु (तथा) गुरु की भक्ति मे, दान मे, शीलो (व्रतो) मे तथा उपवास आदि मे सलग्न आत्मा शुभोपयोगवाला (कहा जाता है)।

83. जीव का शुभ परिणाम पुण्य होता है और (उसका) अशुभ (परिणाम) पाप (होता है)। दोनो कारणो से भाव ने कर्मत्व को प्राप्त किया (है)। (यह) (कर्मत्व) पुद्‍गल की राशि (है)।

84 जिसके (जीवन मे) शुभ राग (होता है) (और) अनुकपा पर आश्रित भाव (होता है) तथा (जिसके) मन मे मलिनता नही (होती है), (उस) जीव के (जीवन मे) पुण्य का आगमन होता है।

85 अरहतो, सिद्धो और साधुओ की (जो) भक्ति (है) तथा धर्म (नैतिक-आध्यात्मिक मूल्यो) मे जो प्रवृत्ति (है) एव पूज्य व्यक्तियो का जो अनुसरण (है), (वे) (सब) शुभ राग (है)। (आचार्यों द्वारा) शुभ राग के अन्तर्गत (ये) (बात) कही जाती है।

86 भूखे, प्यासे अथवा (किसी) दुःखी (प्राणी) को देखकर जो भी कोई दुःखी मनवाला (होकर) उसके प्रति दयालुता से व्यवहार करता है, उसके यह अनुकपा होती है।

87. कोधो व जदा माणो माया लोभो व चित्तमासेज्ज ।
जीवस्स कुणदि खोहं कलुसो त्ति य तं बुधा वेंति ॥

88. चरिया पमादबहुला कालुस्सं लोलदा य विसयेसु ।
परपरितावपवादो पावस्स य आसवं कुणदि ॥

89. सण्णाओ य तिलेस्सा इंदियवसदा य अत्तरुद्दाणि ।
णाणं च दुप्पउत्तं मोहो पावप्पदा होंति ॥

90. भावं तिविहपयारं सुहासुहं सुद्धमेव णायव्वं ।
असुह च अट्टरुद्दं सुहधम्मं जिणवरिंदेहिं ॥

91. जो जाणादि जिणिंदे पेच्छदि सिद्धे तधेव अणगारे ।
जीवे य साणुकंपो उवओगो सो सुहो तस्स ॥

92. विसयकसाओगाढो दुस्सुदिदुच्चित्तदुट्ठगोट्ठिजुदो ।
उग्गो उम्मग्गपरो उवओगो जस्स सो असुहो ॥

93. सुद्धं सुद्धसहावं अप्पा अप्पम्मि तं च णायव्वं ।
इदि जिणवरेहिं भणियं जं सेयं तं समायरह ॥

87 जिस समय क्रोध या मान या माया या लोभ चित्त मे घटित होता है, उस समय (वह्) जीव के चित्त मे व्याकुलता उत्पन्न करता है। (यह्) निस्सन्देह मलिनता (है)। ज्ञानी (ऐसा) कहते हैं।

88 (कर्तव्य-पालन मे) लापरवाहीपूर्वक ग्राचरण,(चित्त की) मलिनता, (इन्द्रिय)-विषयो मे लालसा और दूसरे को पीडा देना व (उस पर) कलक लगाना-(यह सब) पाप (कर्म) के ग्राने को प्रोत्साहित करता है।

89 (चार) सज्ञाएँ, तीन (ग्रशुभ) लेश्याएँ, (पच) इन्द्रियो की ग्रधीनता, ग्रार्त्त ग्रौर रौद्र ध्यान, ग्रनुचित रूप से प्रयोग किया हुग्रा ज्ञान, मोह (ग्राध्यात्मिक विमुखता)–ये सब पाप के स्थान होते है।

90 (जो) (ग्रात्मा का) भाव (है) (उसके) तीन प्रकार के भेद (हैं)। (वह भाव) शुभ, ग्रशुभ (तथा) शुद्ध ही समझा जाना चाहिए। ग्ररहतो द्वारा (कहा गया है कि) धर्म (ध्यान) शुभ (है) तथा ग्रार्त्त ग्रौर रौद्र (ध्यान) ग्रशुभ (है)।

91 जो (व्यक्ति) ग्ररहतो को समझता है, सिद्धो को समझता है, उसी प्रकार (जो) साधुग्रो को (भी) समझता है) (तथा) जीवो पर दयावान (होता है), उसका वह उपयोग शुभ (कहा जाता है)।

92 जिस (व्यक्ति) का उपयोग विषय-कषायो मे डूबा हुग्रा (है), (जिसका) (उपयोग) दुष्ट सिद्धात, दुष्ट बुद्धि, (तथा) दुष्ट चर्या से जुडा हुग्रा (है), (जिसका) (उपयोग) क्रूर (है) तथा कुपथ मे लीन है, (उसका) वह (उपयोग) ग्रशुभ (है)।

93 (जो) (ग्रात्मा का) शुद्ध स्वभाव (है), (वह) शुद्ध (भाव) (है), वह (शुद्ध भाव) ग्रात्मा के द्वारा ग्रात्मा मे ही ग्रनुभव किया जाना चाहिए। [तीनो (शुभ-ग्रशुभ-शुद्ध) मे] जो श्रेष्ठ (है), (तुम) उस का ग्राचरण करो। इस प्रकार ग्ररहत द्वारा कहा गया (है)।

94. उवओगो जदि हि सुहो पुण्णं जीवस्स संचयं जादि ।
असुहो वा तध पावं तेसिमभावे ण चयमत्थि ।।

95. अह पुण अप्पा णिच्छदि पुण्णाइं करेदि णिरवसेसाइं ।
तह वि ण पावदि सिद्धिं संसारत्थो पुणो भणिदो ।।

96. वदणियमाणि धरंता सीलाणि तहा तव च कुव्वंता ।
परमट्ठबाहिरा जे णिव्वाणं ते ण विदंति ।।

97. सुहपरिणामो पुण्णं असुहो पावत्ति भणियमण्णेसु ।
परिणामोणण्णगदो दुक्खक्खयकारणं समये ।।

98. आदसहावा अण्णं सच्चित्ताचित्तमिस्सियं हवइ ।
तं परदव्वं भणियं अवितत्थं सव्वदरसीहिं ।।

99. जस्स हिदयेणुमत्तं परदव्वम्हि विज्जदे रागो ।
सो ण विजाणदि समयं सगस्स सव्वागमधरोवि ।।

100. जो सव्वसंगमुक्को णाण्णमणो अप्पणं सहावेण ।
जाणदि पस्सदि णियदं सो सगचरियं चरदि जीवो ।।

94 यदि जीव का उपयोग शुभ (होता है), (तो) (जीव) पुण्य सग्रह करता है और (यदि) (उसका) अशुभ (उपयोग होता है), तो उसी तरह (जीव) पाप (सग्रह करता है)। उन (शुभ-अशुभ) के अभाव मे (पुण्य-पाप कर्म का) सग्रह नही होता है।

95 यदि (मनुष्य) आत्मा को नही चाहता है, किन्तु (वह) (केवल) सकल पुण्यो (शुभो) को (ही) करता है, तो भी (वह) परम शाति नही पाता है और (वह) ससार (मानसिक तनाव/अशान्ति) मे ही स्थित कहा गया (है)।

96 व्रत और नियमो को धारण करते हुए तथा शीलो और तप का पालन करते हुए (भी) जो (व्यक्ति) परमार्थ (शुद्ध आत्म-तत्व) से अपरिचित (है), वे परम शान्ति को प्राप्त नही करते है।

97 पर के प्रति शुभ भाव पुण्य (है), अशुभ (भाव) पाप (है)। इस प्रकार यह कहा गया (है)। पर मे न झुका हुआ भाव आगम मे दुःख के नाश का कारण (कहा गया है)।

98 आत्म-स्वभाव से अन्य (जो) सचित्त-अचित्त (तथा) मिश्रित (द्रव्य) होता है, वह सर्वज्ञ द्वारा सच्चाईपूर्वक परद्रव्य कहा गया है।

99 जिस (व्यक्ति) के हृदय मे परद्रव्य पर अणु के बराबर भी राग (आसक्ति) विद्यमान है, वह समस्त आगमो का धारण करनेवाला (होकर) भी आत्मा के आचरण को नही समझता है।

100 जो व्यक्ति सम्पूर्ण आसक्ति से रहित (होता हुआ) (आत्मा मे) तल्लीन (होकर) आत्मा को स्वभाव से जानता-देखता है, वह निश्चयात्मक रूप से आत्मा मे आचरण करता है।

101. एवं विदिदत्थो जो दव्वेसु ण रागमेदि दोसं वा ।
उवओगविसुद्धो सो खवेदि देहुब्भवं दुक्खं ।।

102. अइसयमादसमुत्थं विसयातीदं अणोवममणंतं ।
अव्वुच्छिण्ण च सुहं सुद्धुवओगप्पसिद्धाणं ।।

103. धम्मेण परिणदप्पा अप्पा जदि सुद्धसंपयोगजुदो ।
पावदि णिव्वाणसुहं सुहोवजुत्तो व सग्गसुहं ।।

104. चारित्तं खलु धम्मो धम्मो जो सो समोत्ति णिद्दिट्ठो ।
मोहक्खोहविहीणो परिणामो अप्पणो हु समो ।।

105. तह सो लद्धसहावो सव्वण्हू सव्वलोगपदिमहिदो ।
भूदो सयमेवादा हवदि सयंभुत्ति णिद्दिट्ठो ।।

106. उवओगविसुद्धो जो विगदावरणंतरायमोहरओ ।
भूदो सयमेवादा जादि पर णेयभूदाण ।।

101. इस प्रकार (जिसके द्वारा) वस्तुस्थिति (शुभ-अशुभ मे मानसिक तनावात्मक समानता) जानी गई (है), (और जिसके फलस्वरूप) जो वस्तुओ के प्रति राग-द्वेष (आसक्ति) नही करता है, वह उपयोग (चैतन्य) से शुद्ध (रहता है) (तथा) देह से उत्पन्न दु ख को समाप्त कर देता है।

102 शुद्ध उपयोग (आत्मानुभव) से विभूषित (व्यक्तियो) का सुख श्रेष्ठ, आत्मोत्पन्न, विपयातीत, अनुपम, अनन्त तथा अविच्छिन्न (होता है)।

103 यदि व्यक्ति शुद्ध (समतारूप) क्रियाओ से युक्त (होता है), (तो) (वह) धर्म (समता) के रूप मे रूपान्तरित व्यक्ति (कहा गया है)। (अत) (वह) परम शान्तिरूपी सुख को प्राप्त करता है। तथा (यदि) (वह) शुभ क्रियाओ से युक्त (होता है), (तो) स्वर्ग सुख को (प्राप्त करता है)।

104 निस्सन्देह चारित्र धर्म (होता है)। जो समता (है), वह निश्चय ही धर्म कहा गया (है)। (समझो) मोह (आध्यात्मिक विस्मरण) और क्षोभ (हर्ष-शोकादि द्वन्द्वात्मक प्रवृत्ति) से रहित आत्मा का भाव ही समता (कहा गया है)। (अत समता ही चारित्र होता है)।

105 तथा वह व्यक्ति (जिसके द्वारा) स्वय ही स्वभाव अनुभव कर लिया गया (है), (जो) (स्वय) (ही) सर्वज्ञ हुआ (है), (जो) लोकाधिपति इन्द्र द्वारा पूजा गया (है), (वह) (वास्तव मे) स्वयभू (स्वय ही उच्चतम अवस्था पर पहुँचा हुआ) होता है। इस प्रकार (अर्हन्तो) द्वारा कहा गया (है)।

106 जो व्यक्ति उपयोग (ज्ञानात्मक क्रिया) मे शुद्ध (समतारूप) (हुआ है), (उसके द्वारा) (ज्ञान पर) आवरण, (शक्ति प्रकट होने मे) बाधा (तथा) मोहरूपी (आध्यात्मिक विस्मरण एव आसक्तिरूपी) धूल नष्ट कर दी गई (है)। (अत) (वह) (व्यक्ति) स्वय ही ज्ञेय पदार्थो को पूर्ण रूप से जान लेता है।

107. सुविदिदपदत्थसुत्तो संजमतवसंजुदो विगदरागो ।
समणो समसुहदुक्खो भणिदो सुद्धोवओगोत्ति ।

108. ठाणणिसेज्जविहारा धम्मुवदेसो य णियदयो तेसिं ।
अरहंताणं काले मायाचारोव्व इत्थीणं ॥

109. सव्वेसिं खंधाणं जो अंतो तं वियाण परमाणू ।
सो सस्सदो असद्दो एक्को अविभागि मुत्तिभवो ॥

110. आदेशमत्तमुत्तो धादुचदुक्कस्स कारणं जो दु ।
सो णेओ परमाणू परिणामगुणो सयमसद्दो ॥

111 सद्दो खंधप्पभवो खंधो परमाणुसंगसंघादो ।
पुट्ठेसु तेसु जायदि सद्दो उप्पादगो णियदो ॥

112. एयरसवण्णगंधं दो फासं सद्दकारणमसद्दं ।
खंधंतरिदं दव्वं परमाणु तं वियाणेहि ॥

107 श्रमण (जिसके द्वारा) तत्व (अध्यात्म) (तथा) (उसका प्रतिपादन करनेवाले) सूत्र–(ग्रन्थ) भली प्रकार से जान लिए गये (है), (जो) सयम और तप से सयुक्त (है), (जिसके द्वारा) राग समाप्त कर दिया गया (है), जिसके द्वारा सुख और दु ख समान (समझ लिए गए है), (वह) शुद्धोपयोगवाला (समता को प्राप्त) कहा गया (है) ।

108 उन अरहतो के (उस) समय (अरहत अवस्था) मे खडे रहना, बैठना, गमन करना तथा धर्म (अध्यात्म का उपदेश देना)–(ये सब क्रियाएँ (लोक कल्याण के लिए) निश्चित रूप से (होती है) जैसे कि स्त्रियो मे माताओ का (बालक के कल्याण के लिए) आचरण (होता है) ।

109 जो समस्त पुद्गल-पिण्डो का अन्तिम अश (है), उसको (तुम) परमाणु समझो । वह (परमाणु) शाश्वत, शब्दरहित, एक (प्रदेशीय) (है), (वह) अविभाज्य और भौतिक वस्तुओ का मूल (है) ।

110 (अपने) विवरण से ही (जो) मूत (रूप, रसादि गुणो से युक्त) है, जो चार मूल तत्वो (पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु) का कारण (है), परिणमन गुणवाला (है), स्वय शब्दरहित (है), वह परमाणु समझा जाना चाहिए ।

111 शब्द स्कन्धो से उत्पन्न (होता है) । स्कन्ध परमाणुओ के सगम-समूह से (उत्पन्न होता है) । उनमे (आपसी) स्पर्श से शब्द उत्पन्न होता है । (वह) (स्पर्श) (शब्दो को) अवश्य उत्पन्न करने–वाला (है) ।

112 यह द्रव्य (जिसमे) एक रस, (एक) वर्ण, एक गध तथा दो स्पर्श समूह (होते है), (जो) शब्द का कारण (है), (स्वय) शब्दरहित (है) (तथा) (जिसका) स्कन्ध से सबध (रहता है), (वह) परमाणु है । उसको (तुम सब) समझो ।

113 उवभोज्जमिंदिएहि य इंदिय काया मणो य कम्माणि ।
जं हवदि मुत्तमण्णं त सव्वं पुग्गलं जाणे ॥

114. देहो य मणो वाणी पोग्गलदव्वप्पगत्ति णिद्दिट्ठा ।
पोग्गलदव्वंपि पुणो पिंडो परमाणुदव्वाणं ॥

115 अपदेसो परमाणू पदेसमेत्तो य सयमसद्दो जो ।
णिद्धो वा लुक्खो वा दुपदेसादित्तमणुहवदि ॥

116. एगुत्तरमेगादी अणुस्स णिद्धत्तणं व लुक्खत्तं ।
परिणामादो भणिदं जाव अणंतत्तमणुहवदि ॥

117 णिद्धा वा लुक्खा वा अणुपरिणामा समा व विसमा वा ।
समदो दुराधिगा जदि बज्झंति हि आदिपरिहीणा ॥

118. णिद्धत्तणेण दुगुणो चदुगुणणिद्धेण बंधमणुहवदि ।
लुक्खेण वा तिगुणिदो अणु बज्झदि पंचगुणजुत्तो ॥

119. दुपदेसादि खंधा सुहुमा वा बादरा ससंठाणा ।
पुढविजलतेउवाऊ सगपरिणामेहि जायंते ॥

120. अइथूलथूल थूलं थूलसुहुमं सुहुमथूलं च ।
सुहुमं अइसुहुमं इदि धरादियं होदि छब्भेयं ॥

113 इन्द्रियाँ तथा इन्द्रियो द्वारा भोगे जाने योग्य विषय-शरीर, मन व कर्म (तथा) जो (भी) अन्य भौतिक (वस्तुएँ) है वह सभी पुद्गल है। (तुम) समझो।

114 देह, मन और वाणी–(ये) (सभी) पुद्गल द्रव्य से बने हुए कहे गये (है) और पुद्गल द्रव्य भी परमाणु द्रव्यो का पिण्ड है।

115 जो परमाणु एक प्रदेश जितना (होता है), (अन्य) प्रदेशरहित (होता है) तथा स्वय शब्दरहित (होता है), (वह) स्निग्ध अथवा रूखा (होता है) और (आपस मे) मिलकर दो, (तीन) प्रदेश आदिपने को ग्रहण करता है।

116 एक से आरभ करके एक के बाद मे अनन्त तक परमाणु के परिणमन (स्वभाव) के कारण (उसके) स्निग्धता और रुक्षता कही गई (है)।

117 परमाणुओ का परिणमन सम (2, 4, 6 .) (हो) अथवा विषम (3, 5, 7) (हो), स्निग्ध रूप (हो) अथवा रुक्षरूप (हो), (वे) यदि प्रथम अशरहित (होते है) तथा प्रत्येक सख्या से दो ही अधिक (होते है), (तो) निश्चय ही (आपस मे) बध जाते है।

118 (जब) परमाणु स्निग्धता मे दो अश (होता है), (तो) चार अश स्निग्ध के साथ बध अनुभव करता है। और रुक्षता मे पाँच अश-युक्त (परमाणु) तीन-अश युक्त (रुक्षता) से बाँधा जाता है।

119 दो प्रदेश से आरभ करके (विभिन्न) आकार सहित सूक्ष्म तथा स्थूल स्कन्ध (होते हैं)। (परमाणु के) स्वकीय परिणमन के द्वारा (ही) पृथिवी, जल, अग्नि, वायु उत्पन्न होते है।

120 अतिस्थूलस्थूल, स्थूल, स्थूल-सूक्ष्म, सूक्ष्म-स्थूल, सूक्ष्म-अतिसूक्ष्म— इस प्रकार पृथिवी से आरभ करके (स्कन्ध के) छह भेद होते हैं।

121. भूपव्वदमादीया भणिदा अइथूलथूलमिदि खंधा ।
थूला इदि विण्णेया सप्पीजलतेलमादीया ।।

122. छायातवमादीया थूलेदरखंधमिदि वियाणाहि ।
सुहुम थूलेदि भणिया खंधा चउरक्खविसया य ।।

123. सुहुमा हवंति खंधा पावोग्गा कम्मवग्गणस्स पुणो ।
तव्विवरीया खधा अइसुहुमा इदि परुवेंदि ।।

124. अत्तादि अत्तमज्झं अत्तंतं णेव इंदिए गेज्झं ।
अविभागी जं दव्वं परमाणू तं वियाणाहि ।।

125. एयरसरूवगंधं दो फासं तं हवे सहावगुणं ।
विहावगुणमिदि भणिदं जिणसमये सव्वपयडत्तं ।।

126. अण्णनिरावेक्खो जो परिणामो सो सहावपज्जाओ ।
खंधसरूवेण पुणो परिणामो सो विहावपज्जाओ ।।

127. धम्मत्थिकायमरसं अवण्णगंधं असद्दमप्फासं ।
लोगोगाढं पुट्ठं पिहुलमसंखादियपदेसं ।।

128 उदयं जह मच्छाणं गमणाणुग्गहयरं हवदि लोए ।
तह जीवपुग्गलाणं धम्मं दव्वं वियाणेहि ।।

121 भू, पर्वत आदि अतिस्थूलस्थूल स्कन्ध कहे गये (है)। घी, जल, तेल आदि स्थूल (स्कन्ध) समझे जाने चाहिए।

122 छाया, धूप आदि (नेत्र के विषय होने के कारण) स्थूल-सूक्ष्म (स्कन्ध) (है)। (तुम) जानो और चार इन्द्रियो (कर्ण, घ्राण, रसना और स्पर्शन) के विषय सूक्ष्म-स्थूल स्कन्ध कहे गये (हैं)।

123 (आत्मा से) सबध योग्य कर्मवर्गणा के स्कन्ध सूक्ष्म होते है और इसके विपरीत स्कन्ध अतिसूक्ष्म होते (है)। इस प्रकार आचार्य प्रतिपादन करते हैं।

124 जो स्व (ही) आदि (है), स्व (ही) मध्य (है), स्व (ही) अन्त (है), (जो) इन्द्रिय द्वारा ग्रहण योग्य नही (है), (जो) भेद-रहित (है), वह परमाणु (है)। (तुम) जानो।

125 (जिस परमाणु मे) एक रस, (एक) रूप, (एक) गध तथा दो स्पर्श (होते हैं), वह (परमाणु) स्वभाव गुणवाला होता है। सबके लिए प्रकटता गुणवाला (स्कन्ध) जिनशासन मे विभाव-गुणवाला कहा गया (है)।

126 (परमाणु मे) (जो) दूसरे की अपेक्षारहित परिणमन (होता है), वह स्वभाव-परिणमन है। और (उसमे) जो स्कन्धरूप से परिणमन (होता है), वह विभाव-परिणमन (है)।

127 धर्मास्तिकाय (द्रव्य) रसरहित, वर्णरहित, गधरहित, शब्दरहित और स्पर्शरहित (होता है)। (वह) लोक मे व्याप्त रहता है, और असख्यात प्रदेशवाला (होता है) (तथा) (उसके प्रदेश) (एक दूसरे को) छुए हुए (रहते हैं)।

128. जिस प्रकार लोक मे जल मछलियो के गमन मे उपकार करनेवाला होता है, उसी प्रकार जीव और पुद्गलो के लिए (गमन मे उपकार करनेवाला) धर्म द्रव्य (होता है)। (इसे) (तुम) समझो।

129 जह हवदि धम्मदव्वं तह तं जाणेह दव्वमधमक्खं।
ठिदिकिरियाजुत्ताणं कारणभूदं तु पुढवीव ॥

130. ण य गच्छदि धम्मत्थी गमण ण करेदि अण्णदवियस्स।
हवदि गती स प्पसरो जीवाणं पुग्गलाणं च ॥

131. विज्जदि जेसिं गमणं ठाणं पुण तेसिमेव संभवदि।
ते सगपरिणामेहिं दु गमणं ठाणं च कुव्वंति ॥

132. गमणणिमित्तं धम्मं, अधम्मं ठिदि जीवपोग्गलाणं च।
अवगहण आयासं, जीवादी सव्वदव्वाणं ॥

133. सव्वेसिं जीवाणं सेसाणं तह य पुग्गलाण च।
ज देदि विवरमखिलं तं लोए हवदि आयासं ॥

134. पुग्गलजीवणिबद्धो धम्माधम्मत्थिकायकालड्ढो।
वट्टदि आयासे जो लोगो सो सव्वकाले दु ॥

135. सब्भावसभावाण जीवाणं तह य पोग्गलाणं च।
परियट्टणसंभूदो कालो णियमेण पण्णत्तो ॥

129 जिस प्रकार (सामान्य) (गुणो मे) धर्मास्तिकाय द्रव्य (होता है), उसी प्रकार उस अधर्मास्तिकाय नामवाले द्रव्य को (तुम) जानो। किन्तु (वह) स्थिति क्रिया मे तत्पर (जीव-पुद्गल) के लिए कारण बना हुआ (है), जैसे पृथ्वी (जीव-पुद्गल की) (स्थिति के लिए) (कारण होती है)।

130 धर्मास्तिकाय (द्रव्य) (स्वय) गतिशील नही (होता है) तथा दूसरे द्रव्यो को गति प्रदान नही करता है। (उससे) (तो) जीवो और पुद्गलो की स्व (उत्पन्न) गति मे फैलाव होता है।

131 जिन (जीवो और पुद्गलो) की गति होती है, फिर उन्ही की स्थिति होती है। अत वे (जीव और पुद्गल) अपने परिणमन के द्वारा ही गति और स्थिति को उत्पन्न करते है। (धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय द्रव्य गति-स्थिति उत्पन्न नही करते हैं)।

132 जीवो और पुद्गलो की गति मे (जो) (उदासीन) निमित्त (है), (वह) धर्मास्तिकाय (द्रव्य) (है)। (उनकी) स्थिति मे (जो) (निमित्त) (है), (वह) अधर्मास्तिकाय (द्रव्य) (है)। जीव आदि सभी द्रव्यो के लिए (जो) ठहरने का स्थान (होता है), (वह) आकाश (है)।

133 लोक मे सभी जीवो के लिए और पुद्गलो के लिए और इसी प्रकार शेप द्रव्यो (धर्म, अधर्म और काल) के लिए जो पूरा स्थान देता है, वह आकाश होता है।

134 जो (भाग) (विस्तृत) आकाश मे पुद्गलो और जीवो से जुडा हुआ (है), (जो) धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय और काल से युक्त है, वह सभी समय (तीनो कालो) मे 'लोक' (कहा जाता है)।

135 (वह) काल कहा गया (है) (जिसके) (कारण) अस्तित्व भाव को जीवो और उसी प्रकार पुद्गलो मे परिवर्तन अनिवार्यत उत्पन्न हुआ (करता है)।

136. णत्थि चिरं वा खिप्पं मत्तारहिदं तु सा वि खलु मत्ता ।
पुग्गलदव्वेण विणा तम्हा कालो पडुच्चभवो ।।

137. कालो परिणामभवो परिणामो दव्वकालसंभूदो ।
दोण्हं एस सहावो कालो खणभंगुरो णियदो ।।

138. जीवादीदव्वाणं परिवट्टणकारणं हवे कालो ।
धम्मादिचउण्णाणं सहागुवणपज्जया होंति ।।

139. दव्वं सल्लक्खणिय उत्पादव्वयधुवत्तसंजुत्तं ।
गुणपज्जयासयं वा जं तं भण्णंति सव्वण्हू ।।

140. सत्ता सव्वपयत्था सविस्सरूवा अणंतपज्जाया ।
भंगुप्पादधुवत्ता सप्पडिवक्खा हवदि एक्का ।।

141. उप्पत्ती व विणासो दव्वस्स य णत्थि अत्थि सब्भावो ।
विगमुप्पाद धुवत्तं करेंति तस्सेव पज्जाया ।।

142. पज्जयविजुदं दव्वं दव्वविजुत्ता य पज्जया णत्थि ।
दोण्हं अणण्णभूदं भावं समणा परूविंति ।।

143. दव्वेण विणा ण गुणा गुणेहिं दव्वं विणा ण संभवदि ।
अव्वदिरित्तो भावो दव्वगुणाणं हवदि तम्हा ।।

144. भावस्स णत्थि णासो णत्थि अभावस्स चेव उप्पादो ।
गुणपज्जयेसु भावा उप्पादवए पकुव्वंति ।।

136 माप के बिना 'दीर्घ काल' और 'तुरन्त' (ऐसे शब्द) नही (होते हैं)। तथा वह माप भी पुद्गल द्रव्य के बिना नही (होता है)। इसलिए (ऐसा) काल आश्रय से उत्पन्न (है)।

137 (व्यवहार) काल पुद्गल के परिवर्तन से उत्पन्न हुआ (है), परिवर्तन द्रव्यकाल से उत्पन्न हुआ (है)। दोनो का यह स्वभाव (है)। (अत) (व्यवहार) काल नश्वर (है), और (द्रव्यकाल) स्थायी (है)।

138 जीव आदि द्रव्यो के परिवर्तन का कारण काल होता है। धर्मादि चार अन्य (द्रव्यो) मे स्वभावगुणपर्याय होती है।

139 जो सत्लक्षणयुक्त (है), उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य से सहित है और (जो) गुण और पर्याय का आश्रय (है), वह द्रव्य (है) इस प्रकार सर्वज्ञ कहते है।

140 सत्ता सर्वपदार्थमय होती है, अनेक प्रकारसहित (रहती है), अनन्त पर्यायवाली (है), उत्पाद, व्यय और ध्रुवतामय (है), एक (है), विरोधी पहलू-सहित है।

141 द्रव्य की न उत्पत्ति (होती है) और न ही (उसका) विनाश (होता है)। (वह) (तो) अस्तित्व स्वभाववाला है। उस (द्रव्य) की पर्याये ही उत्पत्ति, नाश और ध्रुवता को प्रकाशित करती है।

142 पर्यायरहित द्रव्य नही है, द्रव्यरहित पर्याय भी (नही है), दोनो का अस्तित्व अभिन्न बना हुआ (है)। (ऐसा) श्रमण कहते है।

143 द्रव्य के बिना गुण नही (होते है), गुण के बिना द्रव्य नही (होता है)। अत द्रव्य और गुण का अस्तित्व अभिन्न होता है।

144 सत् (विद्यमान पदार्थ) का नाश नही (होता है), असत् (अविद्यमान पदार्थ) का उत्पाद नही (होता है)। द्रव्य गुण-पर्यायो के द्वारा ही उत्पाद-व्यय करते है।

145 भावा जीवादीया जीवगुणा चेदणा य उवओगो।
सुरणरणारयतिरिया जीवस्स य पज्जया बहुगा ॥

146. मणुसत्तणेण णट्ठो देही देवो हवेदि इदरो वा।
उभयत्त जीवभावो ण णस्सदि ण जायदे अण्णो ॥

147. सो चेव जादि मरणं जादि ण णट्ठो ण चेव उप्पण्णो।
उप्पण्णो य विणट्ठो देवो मणुसो त्ति पज्जाओ ॥

148. अत्थो खलु दव्वमओ दव्वाणि गुणप्पगाणि भणिदाणि।
तेहिं पुणो पज्जाया पज्जयमूढा हि परसमया ॥

149 जे पज्जयेसु णिरदा जीवा परसमयिगत्ति णिद्दिट्ठा।
आदसहावम्मि ठिदा ते सगसमया मुणेदव्वा ॥

□

145 जीव आदि सत् (विद्यमान पदार्थ) (है)। चेतना और ज्ञान जीव के गुण (है)। जीव की अनेक पर्याय (है)—देव, मनुष्य, नारकी और तिर्यञ्च।

146 (मरण के कारण) मनुष्यत्व से लुप्त हुआ जीव (पुनर्जन्म लेते समय) देव अथवा अन्य कोई पर्यायवाला उत्पन्न होता है। (किन्तु) दोनो मे स्थित जीव पदार्थ (द्रव्य) न नष्ट होता है और न ही नया उत्पन्न होता है, अर्थात् जीव वही रहता है।

147 वही (जीव) (पुनर्जन्म मे) उत्पन्न होता है (जो) मरण को प्राप्त होता है। वह न नष्ट हुआ (है) (और) न (ही) (नया) उत्पन्न हुआ (है)। इस प्रकार मनुष्य पर्याय नष्ट हुई (है) और देव पर्याय उत्पन्न हुई (है)। (जीव वही वर्तमान है)।

148 पदार्थ द्रव्यमय (होता है)। द्रव्य गुणस्वरूपवाले कहे गये (है)। और उन (द्रव्यो) मे ही पर्याय (उत्पन्न होते है)। (जो) पर्यायो मे ही मोहित (है), (वे) मूर्च्छित (कहे गये है)।

149 जो जीव पर्यायो मे लीन (है), (वे) मूर्च्छित कहे गये (है)। (तथा) जो आत्म-स्वभाव मे ठहरे हुए (है), वे जाग्रत समझे जाने चाहिए।

□

संकेत-सूची

(अ)	—अव्यय (इसका अर्थ = लगाकर लिखा गया है)
अक	—अकर्मक क्रिया
अनि	—अनियमित
आज्ञा	—आज्ञा
कर्म	—कर्मवाच्य
(क्रिविअ)	—क्रिया विशेषण अव्यय (इसका अर्थ = लगाकर लिखा गया है)
तुवि	—तुलनात्मक विशेषण
पु०	—पुल्लिग
प्रे	—प्रेरणार्थक क्रिया
भकृ	—भविष्य कृदन्त
भवि	—भविष्यत्काल
भाव	—भाववाच्य
भू	—भूतकाल
भूकृ	—भूतकालिक कृदन्त
व	—वर्तमानकाल
वकृ	—वर्तमान कृदन्त
वि	—विशेषण
विधि	—विधि
विधिकृ	—विधि कृदन्त
स	—सर्वनाम
संकृ	—सम्बन्धक कृदन्त
सक	—सकर्मक क्रिया
सवि	—सर्वनाम विशेषण
स्त्री	—स्त्रीलिंग
हेकृ	—हेत्वर्थ कृदन्त
( )	—इस प्रकार के कोष्ठक मे मूल शब्द रखा गया है।

[( )+( )+( ).]
इस प्रकार के कोष्ठक के अन्दर + चिह्न किन्ही शब्दो मे संधि का द्योतक है। यहाँ अन्दर के कोष्ठको मे गाथा के शब्द ही रख दिए गए हैं।

[( ) — ( )—( )—]
इस प्रकार के कोष्टक के अन्दर '—' चिह्न समास का द्योतक है।

|[( )—( )—( )] वि]

• जहाँ समस्त पद विशेषण का कार्य करता है, वहाँ इस प्रकार के कोष्ठक का प्रयोग किया गया है।

• जहाँ कोष्ठक के बाहर केवल संख्या (जैसे 1/1, 2/1 आदि) ही लिखी है वहाँ उस कोष्ठक के अन्दर का शब्द 'संज्ञा' है।

• जहाँ कर्मवाच्य, कृदन्त आदि प्राकृत के नियमानुसार नही बने हैं वहाँ कोष्ठक के बाहर 'अनि' भी लिखा गया है।

1/1 अक या सक—उत्तम पुरुष/एकवचन
1/2 अक या सक—उत्तम पुरुष/बहुवचन
2/1 अक या सक—मध्यम पुरुष/एक वचन
2/2 अक या सक—मध्यम पुरुष/बहुवचन
3/1 अक या सक—अन्य पुरुष/एक वचन
3/2 अक या सक—अन्य पुरुष/बहुवचन

1/1—प्रथमा/एकवचन
1/2—प्रथमा/बहुवचन
2/1—द्वितीया/एकवचन
2/2—द्वितीया/बहुवचन
3/1—तृतीया/एकवचन
3/2—तृतीया/बहुवचन
4/1—चतुर्थी/एकवचन
4/2—चतुर्थी/बहुवचन
5/1—पंचमी/एकवचन
5/2—पंचमी/बहुवचन
6/1—षष्ठी/एकवचन
6/2—षष्ठी/बहुवचन
7/1—सप्तमी/एकवचन
7/2—सप्तमी/बहुवचन
8/1—संबोधन/एकवचन
8/2—संबोधन/बहुवचन

व्याकरणिक विश्लेषण एवं शब्दार्थ

1 दव्व (दव्व) 1/1 सहावसिद्ध [(सहाव)-(सिद्ध) भूकृ 1/1 अनि] सदिति [(सत्)+(इति)] सत् (सत्) 1/1 अनि इति (अ)=इस विवरणवाला जिणा (जिण) 1/2 तच्चदो (तच्च) पचमी अर्थक, 'दो'-प्रत्यय=वास्तविक रूप से, समक्खादो (समक्खाद) भूकृ 1/2 अनि सिद्ध (सिद्ध) भूकृ 2/1 अनि आगमदो (आगम) पचमी अर्थक, 'दो'-प्रत्यय=आगम से णेच्छदि [(ण)+(इच्छदि)] ण (अ)=नही इच्छदि (इच्छ) व 3/1 सक जो (ज) 1/1 सवि सो (त) 1/1 सवि हि (अ)=निस्सन्देह परसमओ (परसमअ) 1/1 वि।

1 दव्व=द्रव्य। सहावसिद्ध=स्वभाव से सिद्ध। सत्=सत् इति=इस विवरणवाला। जिणा=जितेन्द्रियो ने। तच्चदो=वास्तविक रूप से। समक्खादो=कहा है। सिद्ध=स्थापित (द्रव्य) को। तध=ठीक इसी प्रकार। णेच्छदि=स्वीकार नही करता है। जो=जो (व्यक्ति)। सो=वह। हि=निस्सन्देह। परसमओ=असत्य दृष्टिवाला।

2 ण (अ)=नही हवदि (हव) व 3/1 अक जदि (अ)=यदि सद्दव्व [(सत्)+(दव्व)] सत् (सत्) 1/1 वि अनि दव्व (दव्व) 1/1 असद्धुव [(असत्)+(धुव)] असत् (असत्) 1/1 वि अनि धुव (धुव) 1/1 वि हवदि (हव) व 3/1 अक त (त) 1/1 सवि कध(अ)=कैसे दव्व (दव्व) 1/1 हवदि (हव) व 3/1 अक पुणो (अ)=पादपूरक अण्ण (अण्ण) 1/1 वि वा(अ)=अथवा तम्हा=अत दव्व (दव्व) 1/1 सय (अ)=स्वय सत्ता (सत्ता) 1/1

2 ण=नही। हवदि=होता है। जदि=यदि। सद्दव्व=सत्, द्रव्य। असद्धुव=असत्, नित्य। हवदि=होता है→होगा। त=वह। कधं=कैसे। दव्व=द्रव्य। हवदि=होता है। अण्ण=भिन्न। वा=अथवा। तम्हा=अत। दव्व=द्रव्य। सय=स्वय। सत्ता=सत्ता।

3 दव्वं (दव्व) 1/1 जीवमजीव [(जीव)+(अजीव)] जीव (जीव) 1/1 अजीव (अजीव) 1/1 जीवो (जीव) 1/1 पुण (अ) = और चेदणोवयोगमयो [(चेदण)+(उवयोगमयो)] [चेदण)-(उवयोगमय) 1/1 वि] पोग्गलदव्वप्पमुहं [(पोग्गल)-(दव्व)-(प्पमुह)[1]1/1 वि] अचेदण (अचेदण) 1/1 वि हववि (हव) व 3/1 अक य (अ) = इसके विपरीत अजीव (अजीव) 1/1 ।

1 समास के अन्त मे अर्थ होता है 'सहित' (आप्टे, सस्कृत-हिन्दी कोश)।

3 दव्व = द्रव्य । जीवमजीव = जीव, अजीव । जीवो = जीव । पुण = और । चेदणोवयोगमयो = चेतन, उपयोगमय । पोग्गलदव्वप्पमुह = पुद्गल द्रव्य-सहित । अचेदण = अचेतन । हववि = होता है । य = इसके विपरीत । अजीव = अजीव ।

4 जाणदि (जाण) व 3/1 सक पस्सदि (पस्स) व 3/1 सक सव्व (सव्व) 2/1 वि इच्छदि (इच्छ) व 3/1 सक सुक्ख (सुक्ख) 2/1 विभेदि (विभेदि) व 3/1 अक अनि दुक्खादो (दुक्ख) 5/1 कुव्वदि (कुव्व) व 3/1 सक हिदमहिद [(हिद)+(अहिद)] हिद (हिद) 2/1 अहिद (अहिद) 2/1 वा (अ) = तथा भुजदि (भुज) व 3/1 सक जीवो (जीव) 1/1 फल (फल) 2/1 तेसिं (त) 6/2 स ।

4 जाणदि = जानता है। पस्सदि = देखता है। सव्व = सबको । इच्छदि = चाहता है। सुक्ख = सुख (को)। विभेदि = डरता है। दुक्खादो = दुःख से। कुव्वदि = करता है। हिदमहिद = उचित और अनुचित को । वा = तथा । भुजदि = भोगता है । जीवो = जीव । फल = फल को । तेसिं = उनके ।

5 सुहदुक्खजाणणा [(सुह)-(दुक्ख)-(जाणणा) 1/1] वा (अ) = तथा हिदपरियम्म[1] [(हिद)-(परियम्म) 1/1] च (अ) = तथा अहिदभीरुत्त [(अहिद)-(भीरुत्त) 1/1] जस्स[2] (ज) 6/1 स ण(अ) = नहीं विज्जदि (विज्ज) व 3/1 अक णिच्च (अ) = कभी भी त (त) 2/1 स समणा (समण) 1/2 बिंति (बू) व 3/2 स अज्जीव (अज्जीव) 2/1 ।

1 परिकर्मन् → परिकर्म → परिकम्म → परियम्म ।

2 कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हेम प्राकृत व्याकरण, 3-134)।

5 सुहदुक्खजाणणा = सुख-दुख का ज्ञान। वा = तथा। हिदपरियम्मं = हित का उत्पादन। च = तथा। अहिदभीरुत्तं = अहित से भय। जस्स = जिसका→ जिसमें। ण = नहीं। विज्जदि = वर्तमान होता है। णिच्च = कभी भी। त = उसको। समणा = श्रमण। बिंति = कहते हैं। अज्जीव = अजीव (को)।

6 जीवा (जीव) 1/2 पोग्गलकाया [(पोग्गल)-(काय) 1/2] धम्माधम्मा [(धम्म) + (अधम्मा)] [(धम्म)-(अधम्म) 1/2] य (अ) = और काल (काल) मूलशब्द 1/1 आयास (आयास) 1/1 तच्चत्था (तच्चत्थ) 1/2 इदि (अ) = शब्दस्वरूपद्योतक भणिदा (भण) भूकृ 1/2 णाणागुणपज्जयेहि [(णाणा) - (गुण)-(पज्जय) 3/2] संजुत्ता (संजुत) भूकृ 1/2 अनि।

6. जीवा = (अनेक) जीव। पोग्गलकाया = पुद्गलो का समूह। धम्माधम्मा = धर्म, अधर्म। य = और। काल = काल। आयास = आकाश। तच्चत्था = वास्तविक पदार्थ (द्रव्य)। भणिदा = कहे गये हैं। णाणागुणपज्जयेहि = अनेक गुण-पर्यायो से। संजुत्ता = सहित।

7 आगासकालजीवा [(आगास) - (काल) - (जीव) 1/2] धम्माधम्मा [(धम्म) + (अधम्मा)] [(धम्म) - (अधम्म) 1/2] य = और मुत्तिपरिहीणा [(मुत्ति) - (परिहीण) भूकृ 1/2 अनि] मुत्त (मुत्त) 1/1 वि पुग्गलदव्व [(पुग्गल) - (दव्व) 1/1] जीवो (जीव) 1/1 खलु (अ) = ही चेदणो (चेदण) 1/1 तेसु (त) 7/2 स।

7. आगासकालजीवा = आकाश, काल, जीव। धम्माधम्मा = धर्म, अधर्म। य = और। मुत्तिपरिहीणा = मूर्ति से रहित (अमूर्तिक)। मुत्त = मूर्त। पुग्गलदव्व = पुद्गल द्रव्य। जीवो = जीव। खलु = ही। चेदणो = चेतन। तेसु = उनमें।

8 जे (ज) 1/2 सवि खलु = पादपूरक इंदियगेज्झा [(इन्दिय)-(गेज्झ) विधि कृ 1/2 अनि] विसया (विसय) 1/2 जीवेहिं (जीव) 3/2 होंति (हो) व 3/2 अक ते (त) 1/2 सवि मुत्ता (मुत्त) 1/2 वि सेस (सेस) 1/1 वि हवदि (हव) व 3/1 अक अमुत्त (अमुत्त) 1/1 वि चित्त (चित्त) 1/1 उभय (उभय) 2/1 वि समादियदि (स+आइ→ समाइ→ समादि→ समादिय) व 3/1 सक।

8 जं = जो । इन्दियगेज्झा = इन्द्रियों से ग्रहण किये जाने योग्य । विसया = पदार्थ । जीवेहिं = जीवो द्वारा । होंति = होते हैं । ते = वे । मुत्ता = मूर्त । सेस = शेष । हवदि = होता है । अमुत्त = अमूर्त । चित्त = चित । उभय = दोनो को । समादियदि = भली प्रकार से समझता है ।

9 वण्णरसगधफासा [(वण्ण) - (रस) - (गध) - (फास) 1/2] विज्जते (विज्जते) व 3/2 अक अनि पुग्गलस्स[1] (पुग्गल) 6/1 सुहुमादो (सुहुम) 5/1 पुढवीपरियतस्स[1] ([पुढवी) - (परियत) 6/1 वि] य = भी सद्दो (सद्द) 1/1 सो (त) 1/1 सवि पोग्गलो (पोग्गल) 1/1 चित्तो (चित्त) 1/1 वि ।

1 कभी-कभी षष्ठी विभक्ति का प्रयोग सप्तमी के स्थान पर पाया जाता है (हेम-प्राकृत-व्याकरण, 3–134) ।

9 वण्णरसगधफासा = वर्ण, रस, गध, स्पर्श । विज्जते = वर्तमान रहते हैं । पुग्गलस्स = पुद्गल के → पुद्गल मे । सुहुमादो = सूक्ष्म से । पुढवीपरियतस्स = पृथिवी तक फैले हुए । य = और । सद्दो = शब्द । सो = वह । पोग्गलो = पुद्गलो । चित्तो = विभिन्न प्रकार का ।

10-11 आगासस्सवगाहो [(आगासस्स) + (अवगाहो)] आगासस्स (आगास) 6/1 अवगाहो (अवगाह) 1/1 धम्मद्दवस्स [(धम्म) - (द्दव) 6/1] गमणहेदुत्त [(गमण) - (हेदुत्त) 1/1] धम्मेदरदव्वस्स [(धम्म) + (इदर) + (दव्वस्स)] [(धम्म) - (इदर) वि - (दव्व) 6/1] दु (अ) = तो गुणो (गुण) 1/1 पुणो = और ठाणकारणदा [(ठाण) - (कारणदा) 1/1]

कालस्स (काल) 6/1 वट्टणा (वट्टणा) 1/1 से (अ) = वाक्य की शोभा, गुणोवओगोत्ति [(गुण) + (उवओगो) + (त्ति)] [(गुण) - (उवओग) 1/1] त्ति (अ) = शब्दस्वरूपद्योतक अप्पणो (अप्प) 6/1 भणिदो (भण) भूकृ 1/1 णेया (णेय) भूकृ 1/2 अनि सखेवादो (सखेव) 5/1 गुणा (गुण) 1/2 हि (अ) = ही मुत्तिप्पहीणाण [(मुत्ति) - (प्पहीण) भूकृ 6/2 अनि]

10-11 आगासस्सवगाहो = आकाश का, स्थान । धम्मद्दवस्स = धर्म द्रव्य का । गमणहेदुत्त = गमन मे निमित्तता । धम्मेदरदव्वस्स = धर्म के, विरोधी, द्रव्य का । दु = तो । गुणो = गुण । पुणो = और । ठाणकारणदा = स्थिति (ठहरने) मे कारणता ।

कालस्स = काल का । वट्टणा = परिणमन (परिवर्तन) । गुणो-वओगोत्ति = गुण, उपयोग (ज्ञान-चैतन्य) । अप्पणो = आत्मा का । भणिदो = कहा गया । णेया = समझे जाने चाहिए । सखेवादो = संक्षेप में । गुणा = गुण । हि = ही । मुत्तिप्पहीणाण = मूर्तिरहित (द्रव्यों) के ।

12 आगासकालपुग्गलधम्माधम्मेसु [(आगास) + (काल) + (पुग्गल) + (धम्म) + (अधम्मेसु)] [(आगास)-(काल)-(पुग्गल)-(धम्म)-(अधम्म)7/2] णत्थि = नही (रहते) हैं । जीवगुणा [(जीव)-(गुण) 1/2] तेसिं[1] (त) 6/2 स अचेदणत्त (अचेदणत्त) 1/1 भणिद (भण) भूकृ 1/1 जीवस्स[1] (जीव) 6/1 चेदणदा (चेदणदा) 1/1 ।

1 कभी कभी षष्ठी का प्रयोग सप्तमी के स्थान पर पाया जाता है (हेम प्राकृत व्याकरण, 3-134) ।

12 आगासकालपुग्गलधम्माधम्मेसु = आकाश, काल, पुद्गल, धर्म, अधर्म में । णत्थि = नही रहते हैं । जीवगुणा = जीव के गुण । तेसिं = उनके→उनमे । अचेदणत्त = अचेतनता । भणिद = कही गई है । जीवस्स = जीव के→जीव मे । चेदणदा = चेतनता ।

13 जीवा = जीव 1/2 पुग्गलकाया [(पुग्गल)-(काय) 1/2] सह (अ) = साथ-साथ, सक्किरिया [(स) वि-(क्किरिया) 1/1] हवंति (हव) व 3/2 अक ण (अ) = नही य = किन्तु सेसा (सेस) 1/2 वि पुग्गलकरणा [(पुग्गल)-(करण) 5/1] जीवा (जीव) 1/2 खधा (खध) 1/2 खलु (अ) = पादपूरक कालकरणा [(काल)-(करण) 5/1] दु (अ) = और ।

13 जीवा = जीव । पुग्गलकाया = पुद्गलराशि । सह = साथ-साथ । सक्किरिया = क्रिया-सहित । हवंति = होते हैं । ण = नही । य = किन्तु । सेसा = (शेष) । पुग्गलकरणा = पुद्गल के निमित्त से । जीवा = जीव । खधा = पुद्गल (स्कन्ध) । कालकरणा = काल के निमित्त से । दु = और ।

14 एदे (एद) 1/2 सवि छद्दव्वाणि [(छ)-(दव्व) 1/2] य = पादपूरक काल (काल) 2/1 मोत्तूण (मोत्तूण) सकृ अनि अत्थिकायत्ति [(अत्थिकाय) + (त्ति)] अत्थिकाय (अत्थिकाय)/मूलशब्द 1/2 त्ति (अ) = शब्दस्वरूपद्योतक । णिद्दिट्ठा (णिद्दिट्ठ) भूकृ 1/2 अनि जिणसमये

[(जिण)-(समय) 7/1] काया (काय) 1/2 हु (अ) = ही बहुप्पदेसत्त (बहुप्पदेसत्त) 1/1।

14 एदे = ये । छद्दव्वाणि = छ द्रव्य । काल = काल को । मोत्तूण = छोडकर । अत्थिकाय = अस्तिकाय । णिद्दिट्ठा = कहे गये है । जिणसमये = जिन-सिद्धान्त मे । काया = काय । हु = ही । बहुप्पदेसत्त = बहुप्रदेशपना ।

15-16 संखेज्जासखेज्जा-णतपदेसा [(सखेज्ज) + (असखेज्ज) + (अणत) + (पदेसा)] [(सखेज्ज)-(असखेज्ज)-(अणत)-(पदेस) 1/2] हवंति (हव) व 3/2 अक मुत्तस्स (मुत्त) 6/1 धम्माधम्मस्स [(धम्मा) + (अधम्मस्स)] [(धम्म)-(अधम्म)) 6/1] पुणो (अ) = तथा जीवस्स (जीव) 6/1 असखदेसा (असखदेस) 1/2 हु (अ) = पादपूरक ।
लोयायासे (लोयायास) 7/1 ताव (अ) = उतने इदरस्स (इदर) 6/1 वि अणंतयं (अणतय) 1/1 वि य स्वार्थिक हवे (हव) व 3/2 अक देसा (देस) 1/2 कालस्स (काल) 6/1 ण (अ) = नही कायत्त (कायत्त) 1/1 एगपदेसो [(एग)-(पदेस) 1/1] हवे (हव) व 3/1 अक जम्हा (अ) = चूंकि ।

15-16 संखेज्जासखेज्जा-णतपदेसा = सख्येय, असख्येय, अनन्त प्रदेश । हवंति = होते हैं । मुत्तस्स = मूर्त (पुदगल) (द्रव्य) के । धम्माधम्मस्स = धर्म के, अधर्म के । पुणो = तथा । जीवस्स = जीव के । असखदेसा = असख्य प्रदेश ।
लोयायासे = लोकाकाश मे । ताव = उतने→ इतने ही । इदरस्स = विरोधी (अलोकाकाश) मे । अणतय = अनन्त । कालस्स = काल के । ण = नही । कायत्त = कायता । एगपदेसो = एक प्रदेश । हवे = होता है । जम्हा = चूंकि ।

17 आगासमणुणिविट्ठ [(आगास) + (अणु) + (णिविट्ठ)] आगास[1] (आगास) 2/1 [(अणु)-(णिविट्ठ) भूकृ 1/1 अनि] आगासपदेस-सण्णया [(आगास)-(पदेस)-(सण्णा) 3/1 अनि] भणिद (ण) भूकृ 1/1 सव्वेसिं[2] (सव्व) 6/2 सवि च (अ) = पादपूरक अणूण[2] (अणु) 6/2

1 कभी-कभी सप्तमी के स्थान पर द्वितीय का प्रयोग पाया जाता है (हेम-प्राकृत व्याकरण, 3-137) ।
2 कभी-कभी द्वितीया के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हेम-प्राकृत व्याकरण, 3-134) ।

6/2 सक्कदि (सक्क) व 3/1 अक त (त) 1/1 सवि देदुमवकास [(देदु) + (अवकास)] देदु (दा) हेकृ अवकास (अवकास) 2/1 ।

17 आगासमणुणिविट्ठ = आकाश मे, अणु, स्थित । आगासपदेससण्णया = आकाश का (एक) प्रदेश, नाम द्वारा । भणिदं = कहा गया (है) । सव्वेसिं अणूण = सब अणुओ को । सक्कदि = समर्थ होता है । त = वह । देदुमवकास = स्थान देने के लिए ।

18 जस्स (ज) 6/1 स ण = नही सति (अस) व 3/1 अक पदेसा (पदेस) 1/2 पदेसमेत्त [(पदेस)-(मेत्त) 1/1] व(अ) = भी तच्चदो (अ) = वस्तुत णादु (णा) हेकृ सुण्ण (सुण्ण) 1/1 जाण (जाण) विधि 2/1 सक तमत्थ [(त) + (अत्थ)] त (त) 1/1 सवि अत्थ (अत्थ) 1/1 अत्थतरभूदमत्थीदो [(अत्थतर) + (भूद) + (अत्थीदो)] [(अत्थतर)-(भूद) भूकृ 1/1 अनि] अत्थीदो (अत्थि) 5/1 ।

18 जस्स = जिसके । ण = नही । सति = है । पदेसा = प्रदेश । पदेसमेत्त = प्रदेश मात्र । व = भी । तच्चदो = वस्तुत । णादु = जानने के लिए । सुण्ण = शून्य । जाण = समझो । तमत्थ = वह द्रव्य । अत्थतरभूदमत्थीदो = [(अत्थतर) + (भूद) + (अत्थीदो)] = विपरीत, हुआ, अस्तित्व से ।

19 अण्णोण्ण[1] (अण्णोण्ण) 2/1 वि पविसता (पविस) वकृ 1/2 दिता (दा) वकृ 1/2 ओगासमण्णमण्णस्स [(ओगास) + (अण्णमण्णस्स)][2] ओगास (ओगास) 2/1 अण्णमण्णस्स (अण्णमण्ण) 6/1 वि मेलता (मेल) वकृ 1/2 वि = यद्यपि य = तथा णिच्च (अ) = सदैव सग (सग) 2/1 वि सभाव (सभाव) 2/1 ण (अ) = नही विजहति (विजह) व 3/2 सक ।

1 गमन अर्थ मे द्वितीया का प्रयोग है ।

2 कभी-कभी द्वितीया के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हेम-प्राकृत व्याकरण, 3–134) ।

19 अण्णोण्ण = एक दूसरे को → एक दूसरे मे । पविसता = प्रवेश करते हुए । दिता = देते हुए । ओगासमण्णमण्णस्स [(ओगास) + (अण्णमण्णस्स)] = स्थान (को), एक दूसरे को । मेलता = सम्पर्क करते हुए । वि = यद्यपि ।

य = और । णिच्च = मर्दव । सग = निज (को) । सभाव = स्वभाव को । ण = नही । विजहृति = छोड़ते हैं ।

20 जीवोत्ति [(जीवो) + (इति)] जीवो (जीव) 1/1 इति (अ) = शब्द स्वरूप द्योतक हवदि (हव) व 3/1 अक चेदा (चेदा) 1/1 वि उपओग-विसेसिदो [(उपओग)-(विसेसिद) भूकृ 1/1 अनि] पहू (पहु) 1/1 वि कत्ता (कत्तु) 1/1 वि भोत्ता (भोत्तु) 1/1 वि य (अ) = तथा देहमत्तो [(देह)-(मत्त) 1/1 वि] ण हि (अ) = कभी भी नही मुत्तो (मुत्त) 1/1 वि कम्मसजुत्तो [(कम्म)-(सजुत्त) भूकृ 1/1 अनि]

20 जीवोत्ति = जीवो + इति = जीव । हवदि = होता है । चेदा = चेतनामय । उपओगविसेसिदो = ज्ञान-गुण की विशेषता लिये हुए । पहू = समर्थ । कत्ता = कर्त्ता । भोत्ता = भोक्ता । य = तथा । देहमेत्तो = देह जितना । ण हि = कभी भी नही । मुत्तो = इन्द्रियो द्वारा ग्रहण (मूर्त) । कम्मसजुत्तो = कर्मों से युक्त ।

21 पाणेहि (पाण) 3/2 चदुहि (चदु) 3/2 वि जीवदि (जीव) व 3/1 अक जीवस्सदि (जीव) भवि 3/1 अक जो (ज) 1/1 सवि दु (अ) = तथा जीविदो (जीव) भूकृ 1/1 पुव्व (अ) = विगत काल मे सो (त) 1/1 सवि जीवो (जीव) 1/1 पाणा (पाण) 1/2 पुण (अ) = और बलमिंदियमाउ [(बल) + (इदिय) + (आउ)] बल (बल) 1/1 इदिय (इदिय) 1/1 आउ (आउ) मूलशब्द 1/1 उस्सासो (उस्सास) 1/1 ।

21 पाणेहिं = प्राणो से । चदुहिं = चार (से) । जीवदि = जीता है । जीवस्सदि = जीवेगा । जो = जो । दु = तथा । जीविदो = जिया । पुव्व = विगत काल मे । सो = वह । जीवो = जीव । पाणा = प्राण । पुण = और । बलमिंदियमाउ = बल + इदिय + आउ = बल, इन्द्रिय, आयु । उस्सासो = श्वास ।

22 जीवा (जीव) 1/2 ससारत्था (ससारत्थ) 1/2 वि णिव्वादा (णिव्वाद) भूकृ 1/2 अनि चेदणप्पगा [(चेदण) + (अप्पगा)] [(चेदण)-(अप्पग) 1/2 ग स्वार्थिक] वि] दुविहा (दुविह) 1/2 वि उवओग-लक्खणा [[(उवओग)-(लक्खण) 1/2] वि] वि = भी य = तथा

देहादेहप्पवीचारा[1] [(देह) + (ग्रदेह) + (प्पवीचारा)] [[(देह)-(ग्रदेह)-(प्पवीचार) 1/2] वि]

1 प्रविचार→पविचार = भेद (Monier williams, Sam Eng Dictionery)।

22 जीवा = जीव। ससारत्था = ससार मे स्थित। णिव्वादा = ससार मे मुक्त। चेदणप्पगा = चेतना स्वरूपवाले। दुविहा = दो प्रकार के। उवग्रोग-लक्खणा = ज्ञान-स्वभाववाले। वि = भी। य = तथा। देहादेहप्पवी-चारा = देहसहित और देहरहित भेदवाले।

23 एदे (एद) 1/2 सवि सव्वे (सव्व) 1/2 सवि भावा (भाव) 1/2 ववहारणय (ववहारणय) 2/1 पडुच्च (ग्र) = ग्रपेक्षा करके भणिदा (भण) भूकृ 1/2 - हु (ग्र) = सचमुच सव्वे (सव्व) 1/2 सवि सिद्धसहावा [(सिद्ध)-(सहाव) 1/2] सुद्धणया (सुद्धणय) 5/1 ससिदी (ससिदि) 1/1 जीवा (जीव) 1/2।

23 एदे = ये। सव्वे = सभी। भावा = भाव। ववहारणय = व्यवहारनय को। पडुच्च (ग्र) = ग्रपेक्षा करके। भणिदा = कहे गये हैं। हु (ग्र) = सचमुच। सव्वे = सभी। सिद्धसहावा = सिद्ध स्वरूप। सुद्धणया = शुद्धनय से। ससिदी = ससार-चक्र। जीवा = जीव।

24 ग्रप्पा (ग्रप्प) 1/1 परिणामप्पा [(परिणाम) + (ग्रप्पा)] [(परिणाम)-(ग्रप्प) 1/1] वि] परिणामो (परिणाम) 1/1 णाण-कम्मफलभावी [(णाण)-(कम्म)-(फल)-(भावि) 1/1 वि] तम्हा (ग्र) = इसलिए णाण (णाण) 1/1 कम्म (कम्म) 1/1 फल (फल) 1/1 च (ग्र) = ग्रौर ग्रादा (ग्राद) 1/1 मुणेदव्वो (मुण) विधिकृ 1/1।

24 ग्रप्पा = ग्रात्मा। परिणामप्पा = परिणाम-स्वभाववाला। परिणामो = परिणाम। णाणकम्मफलभावी = ज्ञान-(चेतना), प्रयोजन-(चेतना), (कर्म)-फल-(चेतना) के रूप मे, होनेवाला। तम्हा = इसलिए। णाण = ज्ञान-(चेतना)। कम्म = प्रयोजन-(चेतना)। फल = (कर्म)-फल-(चेतना)। च = ग्रौर। ग्रादा = ग्रात्मा। मुणेदव्वो = समझी जानी चाहिए।

25 कम्माण (कम्म) 6/2 फलमेक्को [(फल) + (एक्को)] फल (फल) 2/1 एक्को (एक्क) 1/1 वि एक्को (एक्क) 1/1 वि कज्ज (कज्ज) 2/1. तु (अ) = तथा णाणमध [(णाण) + (अध)] णाण (णाण) 2/1. अध (अ) = अब एक्को (एक्क) 1/1 वि चेदयदि (चेदयदि) व 3/1 सक अनि जीवरासी [(जीव)-(रासि) 1/1] चेदगभावेण [(चेदग)-(भाव) 3/1] तिविहेण (तिविह) 3/1 वि।

25 कम्माण = कर्म के। फलमेक्को = कुछ फल को। एक्को = कुछ। कज्ज = प्रयोजन को। तु = तथा। णाणमध = णाण + अध = ज्ञान को, अब। एक्को = कुछ। चेदयदि = अनुभव करता है। जीवरासी = जीव-समूह। चेदगभावेण = सचेतन परिणमन से।

26 परिणमदि (परिणम) व 3/1 अक चेदणाए (चेदणा) 7/1 आदा (आदा) 1/1 पुण (अ) = तथा चेदणा (चेदणा) 1/1 तिधाभिमदा [(तिधा) + (अभिमदा)] तिधा (अ) = तीन प्रकार से, अभिमदा (अभिमदा) भूकृ 1/1 अनि सा (ता) 1/1 सवि पुण (अ) = फिर णाणे (णाण) 7/1 कम्मे (कम्म) 7/1 फलम्मि (फल) 7/1 वा (अ) = तथा कम्मणो (कम्मणो) 6/1 अनि भणिदा (भण) भूकृ 1/1।

26 परिणमदि = रूपान्तरित होती है। चेदणाए = चेतनारूप में। आदा = आत्मा। पुण (अ) = तथा। चेदणा = चेतना। तिधाभिमदो = तिधा + अभिमदा = तीन प्रकार से, मानी गई है। सा = वह। पुण = फिर। णाणे = ज्ञान में। कम्मे = कर्म में। फलम्मि = फल में। वा = तथा। कम्मणो = कर्म के। भणिदा = कही गई है।

27 णाण (णाण) 1/1 अत्थवियप्पो [(अत्थ)-(वियप्प) 1/1] कम्म (कम्म) 1/1 जीवेण (जीव) 3/1 ज (ज) 1/1 सवि समारद्ध (समारद्ध) भूकृ 1/1 अनि तमणेगविध [(त) + (अणेगविध)] त (त) 1/1 सवि अणेगविध (अणेगविध) 1/1 वि भणिद (भण) भूकृ 1/1 फलत्ति [(फल) + (त्ति)] फल (फल) मूल शब्द 1/1 त्ति (अ) = शब्दस्वरूप द्योतक सोक्ख (सोक्ख) 1/1 व (अ) = तथा दुक्ख (दुक्ख) 1/1 वा (अ) = अथवा।

27 णाण = ज्ञान-(चेतना)। अत्थवियप्पो = पदार्थ का विचार। कम्म = कर्म-(चेतना)। जीवेण = जीव के द्वारा। ज = जो। समारद्ध = धारा गया

है। तमणेगविध = त + अणेगविध = वह, अनेक प्रकार। भणिद = कही गई है। फलत्ति = फल = (कर्म)-फल (चेतना)। मोक्ख = मुग्व। व = तथा। दुक्ख = दु ख। वा (अ) = अथवा।

28 सव्वे (सव्व) 1/2 वि खलु (अ) = वाक्य की शोभा कम्मफल [(कम्म)-(फल) 2/1] थावरकाया (थावरकाय) 1/2 वि तसा (तम) 1/2 वि हि (अ) = पादपूरक कज्जजुद [(कज्ज)-(जुद) भूकृ 2/1 अनि] पाणित्तमदिक्कता [(पाणित्त) + (आदिक्कत्ता)] पाणित्त (पाणित्त) 2/1 आदिक्कता (आदिक्कत) भूकृ 1/2 अनि णाण (णाण) 2/1 विंदति (विंद) व 3/2 सक ते (त) 1/2 सवि जीवा (जीव) 1/2।

28 सव्वे = सभी। कम्मफल = कर्म के फल को। थावरकाया = स्थावर काय। तसा = त्रस। कज्जजुद = प्रयोजन से मिली हुई। पाणित्तमदिक्कता = पाणित्त + अदिक्कता = प्राणीत्व को, पार किए हुए। णाण = ज्ञान को। विंदति = अनुभव करते हैं। ते = वे। जीवा = जीव।

29 एदे (एद) 1/2 सवि जीवणिकाया [(जीव)-(णिकाय) 1/2] पचविहा (पचविह) 1/2 वि पुढविकाइयादीया [(पुढविकाइया) + (आदीया)] [(पुटविकाइय)-(आदीय) 1/2] मणपरिणामविरहिदा [(मण)-(परिणाम)-(विरह) भूकृ 1/2] जीवा (जीव) 1/2 एगेंदिया [(एग) + (इदिया)] [[(एग) वि—(इदिया) 1/2] वि] भणिया (भण) भूकृ 1/2।

29 एदे = ये। जीवणिकाया = जीव-समूह। पचविहा = पाच प्रकार। पुढविकाइयादीया = पुढविकाइय + आदीया = पृथिविकायिक, आदि। मणपरिणामविरहिदो = मन के प्रभाव मे रहित। जीवा = जीव। एगेंदिया = एक इन्द्रियवाले। भणिया = कहे गये।

30 अडेसु (अड) 7/2 पवड्ढता (पवड्ढ) वकृ 1/2 गब्भत्था (गब्भत्थ) 1/2 माणुसा (माणुस) 1/2 य = तथा मुच्छगया [(मुच्छ)[1]-(गय) भूकृ 1/2 अनि] जारिसया (जारिस) 1/2 'य' स्वार्थिक तारिसया (तारिस) 1/2 जीवा (जीव) 1/2 एगेंदिया [(एग) + (इदिया)] [एग) वि-(इदिय) 1/2] वि] णेया (णेय) विधिकृ 1/2 अनि।

1 समास मे दीर्घ का ह्रस्व (मुच्छा→मुच्छ) (हेम-प्राकृत व्याकरण, 1-4)।

30 अंडेसु = अण्डो में । पवड्ढता = बढते हुए । गब्भत्था = गर्भ में स्थित । माणुसा = मनुष्य । य = तथा । मुच्छगया = बेहोश । जारिसया = जिस प्रकार । तारिसया = उसी प्रकार । जीवा = जीव । एगेंदिया = एक इन्द्रियवाले । भणिया = कहे गये ।

31 सवुक्कमादुवाहा [(सवुक्क)-(मादुवाह) 1/2] सखा (सख) 1/2 सिप्पी (सिप्पि) 1/2 अपादगा (अ-पादग) 1/2 वि य = और किमी (किमि) 1/2 जाणंति (जाण) व 3/2 सक रस (रस) 2/1 फास (फास) 2/1 जे (ज) 1/2 सवि ते (त) 1/2 सवि वेइंदिया [(वे) वि-(इंदिय) 1/2] वि] जीवा (जीव) 1/2 ।

31 सवुक्कमादुवाहा = शबूक, मातृवाह । सखा = शख । सिप्पी = सीप । अपादगा = बिना पैरवाले । य = और । किमी = कीट । जाणंति = जानते हैं । रस = रस को । फास = स्पर्श को । जे = जो । ते = वे । वेइंदिया = दो इन्द्रियवाले । जीवा = जीव ।

32 जूगागुंभीमक्कणपिपीलिया [(जूगा)-(गुंभी)-(मक्कण)-(पिपीलिया) 1/1] विच्छियादिया [(विच्छिय)+(आदिया)] [(विच्छिय)-(आदिय) 1/2 'य' स्वार्थिक] कीडा (कीड) 1/2 जाणंति (जाण) व 3/2 सक रस (रस) 2/1 फास (फास) 2/1 गंध (गंध) 2/1 तेइंदिया [[(ते)-(इंदिय) 1/2] वि] जीवा (जीव) 1/2 ।

32 जूगागुंभीमक्कणपिपीलिया = जू, कुम्भी, खटमल, चीटी । विच्छियादिया-विच्छिय+आदिया = बिच्छू, आदि । कीडा = कीडे । जाणंति = जानते हैं । रस = रस को । फास = स्पर्श को । गंध = गन्ध को । तेइंदिया = तीन इन्द्रियवाले । जीवा = जीव ।

33 उद्दंसमसयमक्खियमधुकरभमरा [(उद्दंस) - (मसय) - (मक्खिय)-(मधुकर)-(भमरा) 1/2] पतंगमादीया [(पतंग)+(आदीया)] पतंग[1] (पतंग) 2/1 आदीया (आदीय) 1/2 'य' स्वार्थिक रूप (रूप) 2/1 रस (रस) 2/1 च (अ) = और गंध (गंध) 2/1 फास (फास) पुण (अ) = पादपूरक । ते (स) 1/2 सवि विजाणंति वि (अ) = अत. जाणंति (जाण) व 3/2 सक ।

1 कभी कभी प्रथमा के स्थान पर द्वितीया का प्रयोग पाया जाता है । (हेम प्राकृत-व्याकरण, 3-137 वृत्ति) ।

33 उद्दसमसयमक्खियमधुकरभमरा = मच्छर, डांस, मक्खी, मधुमक्खी, भौरा। पतगमादीया = पतग + ग्रादीया = पतगा आदि। रूप = रूप को। रस = रस को। च = ग्रौर। गध = गध को। फास = स्पर्श को। पुरण = पादपूरक। ते = वे। वि (ग्र) = ग्रत। जाणति = जानते है।

34 सुरणरणारयतिरिया [(सुर)-(णर)-(णारय) वि—(तिरिय) 1/2] वण्णरसप्फासगधसद्दण्हू [(वण्ण)-(रस)-(प्फास)-(गध)-(सद्द)-(ण्हु) 1/2] जलचरथलचरखचरा [(जलचर)-(थलचर)-(खचर) 1/2] वलिया (वल) भूकृ 1/2 पचेंदिया [(पच)-(इदिय) 1/2] वि] जीवा (जीव) 1/2।

34 सुरणरणारयतिरिय = देव, मनुष्य, नारकी, तिर्यञ्च। वण्णरसप्फासगध-सद्दण्हू = वर्ण, रस, स्पर्श, गन्ध ग्रौर शब्द के जाननेवाले। जलचरथल-चरखचरा = जल मे गमन करनेवाले, स्थल पर गमन करनेवाले, ग्राकाश मे गमन करनेवाले। वलिया = गतिशील। पचेंदिया = पचेन्द्रिय। जीवा = जीव।

35 जह = जिस प्रकार पउमरायरयण [(पउमराय)-(रयण) 1/1] खित्त (खित्त) भूकृ 1/1 ग्रनि खीर[1] (खीर) 2/1 पभासयदि (पभासयदि) व 3/1 सक ग्रनि खीर (खीर) 2/1 तह (ग्र) = उसी प्रकार देही (देहि) 1/1 देहत्थो (देहत्थ) 1/1 सदेहमत्त [(स)-(देह)-(मत्त) 2/1]

1 कभी-कभी द्वितीया विभक्ति का प्रयोग सप्तमी के ग्रर्थ मे भी किया है। (हेम प्राकृत व्याकरण, 3—137)।

35 जह = जिस प्रकार। पउयरायरयण = पद्मराग, रत्न। खित्त = डाला हुग्रा। खीर = दूध को→दूध मे। प्रभासयदि = प्रकाशित करता। खीर = दूध को। तह = उसी प्रकार। देही = ग्रात्मा। देहत्थो = देह मे स्थित। सदेहमत्त = स्वदेह मात्र को। पभासयदि = प्रकाशित करता है।

36-37-38

जो (ज) 1/1 सवि खलु (ग्र) = सचमुच, संसारत्थो (ससारत्थ) 1/1 वि जीवो (जीव) 1/1 तत्तो (ग्र) = उस कारण से दु (ग्र) = ही होदि हो व 3/1 ग्रक परिणामो (परिणाम) 1/1 परिणामादो (परिणाम) 5/1 कम्म (कम्म) 1/1 कम्मादो (कम्म) 5/1 होदि (हो) व 3/1 ग्रक गदिसु (गदि) 7/1 ग्रनि गदी (गदि) 1/1।

गदमिधिगस्स [(गदि)+(अधिगस्स)] गदि (गदि) 2/1 अधिगदस्स[1] (अधिगद) भूकृ 6/1 अनि देहो (देह) 1/1 देहादो (देह) 5/1 इंदियाणि (इंदिय) 1/2 जायते (जाय) व 3/2 सक तेहिं (त) 3/2 स दु (अ) = ही विसयग्गहण (विषय)-(ग्गहण) 1/1] तत्तो (अ) = उस कारण से रागो (राग) 1/1 वा (अ) = और दोसो (दोस) 1/1 ।

जायदि (जाय) व 3/1 सक जीवस्सेव [(जीवस्स)+(एव)] जीवस्स (जीव) 6/1 एव (अ) = इस प्रकार भावो (भाव) 1/1 ससारचक्क-वालम्मि [(ससार)-(चक्कवाल) 7/1] इदि (अ) = इस प्रकार जिणवरेहिं (जिणवर) 3/2 भणिदो (भण) भूकृ 1/1 अणादिणिधणो = अण+आदि+णिधणो = (अणादिणिधणो) 1/1 वि सणिधणो (स-णिधण) 1/1 वि वा (अ) = या ।

1 कभी-कभी षष्ठी विभक्ति का प्रयोग पचमी के स्थान पर पाया जाता है (हेम प्राकृत व्याकरण, 3-134) ।

36-37-38

जो = जो । खलु = सचमुच । ससारत्थो = ससार मे स्थित । जीवो = जीव । तत्तो = उस कारण से । दु = ही । होदि = उत्पन्न होता । परि-णामो = भाव । परिणाभादो = भाव से । कम्म = कर्म । कम्मादो = कर्म से । होदि = होता है । गदिसु = गतियो मे । गदी = गमन ।

गदिमधिगस्स = गदि + अधिगस्स = गति को→गति मे, गए हुए (जीव) से । देहो = देह । देहादो = देह से । इंदियाणि = इन्द्रियाँ । जायते = उत्पन्न होती हैं । तेहिं = उनके द्वारा । दु = ही । विसयग्गहण = विषयो का ग्रहण । तत्तो = उस कारण से । रागो = राग । वा = और । दोसो = द्वेष । जायदि = उत्पन्न होता है । जीवस्सेव = जीवस्स + एव = जीव के, इस प्रकार । भावो = मनोभाव । ससारचक्कवालम्मि = आवागमन के समय (मे) । इदि = इस प्रकार । जिणवरेहिं = अर्हतो द्वारा । भणिदो = कहा गया है । अणादिणिधणो = आदिरहित, अन्तरहित । सणिधणो = अन्तसहित । वा = या ।

39 जेसिं (ज) 6/2 विसयसु (विसय) 7/2 रदी (रदि) 1/1 तेसिं (त) 6/2 म दुक्ख (दुक्ख) 1/1 वियाण (वियाण) विधि 2/1 सक सब्भाव (सब्भाव) 1/1 जदि (अ) = यदि त (त) 1/1 सवि ण (अ) =

ण हि (अ) = क्योकि सब्भाव (सब्भाव) 1/1 वावारो (वावार) 1/1 णत्थि (अ) = न विसयत्थ (विसयत्थ) चतुर्थी अर्थक 'अत्थ' अव्यय ।

39 जेसिं = जिन के । विसयेसु = विषयो मे । रदी = रस । तेसिं = उनके । दुक्ख = दु ख । वियाण = समझो । सब्भाव = वास्तविकता । जदि = यदि । त = वह । ण = न । हि = क्योकि । सब्भाव = वास्तविकता । वावारो = प्रवृत्ति । णत्थि = न । विसयत्थ = विषयो के लिए ।

40 तिपयारो [(ति) वि–(पयार) 1/1] सो (त) 1/1 सवि अप्पा (अप्प) 1/1 परब्भिंतरबाहिरो [(पर) + (अब्भिंतर) + (बाहिरो)] [(पर) वि–(अब्भिंतर) वि–(बाहिर) 1/1 वि] हु (अ) = निस्सन्देह हेऊण[1] (हेउ) 6/2, तत्थ (अ) = उस अवस्था मे परो (पर) 1/1 वि झाइज्जइ (झा) व कर्म 3/1 सक अंतोवायेण [(अत) + (उवायेण)] अंत (अ) = आतरिक उवायेण (उवाय) 3/1 चयहि (चय) विधि 2/1 सक बहिरप्पा (बहिरप्प) 2/1 अपभ्रंश ।

1 कभी-कभी तृतीया के स्थान पर षष्ठी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है (हेम प्राकृत व्याकरण, 3–134) ।

40 तिपयारो = तीन प्रकार का । सो = वह । अप्पा = आत्मा । परब्भिंतर-बाहिरो = पर + अब्भिंतर + बाहिरो = परम, आन्तरिक, बहिर (आत्मा) । हु = निस्सन्देह । हेऊण = कारणो के → कारणो से । तत्थ = उस अवस्था मे । परो = परम । झाइज्जइ = ध्याया जाता है । अंतोवायेण = आतरिक के साधन से । चयहि = छोडो । बहिरप्पा = बहिरात्मा को ।

41. अक्खाणि (अक्ख) 1/2 बहिरप्पा (बहिरप्प) 1/1 अतरप्पा (अतरप्प) 1/1 हु (अ) = ही अप्पसकप्पो [(अप्प)–(सकप्प) 1/1] कम्म-कलकविमुक्को [(कम्म)–(कलक–(विमुक्क) 1/1 वि] परमप्पा (परमप्प) 1/1 भण्णए (भण्ण) व कर्म 3/1 सक अनि देवो (देव) 1/1 ।

41 अक्खाणि = इन्द्रियाँ । बहिरप्पा = बहिरात्मा । अतरप्पा = अतरात्मा । हु = ही । अप्पसकप्पो = आत्मा की विचरणा । कम्मकलकविमुक्को = कर्म–कलक से मुक्त । परमप्पा = परम आत्मा । भण्णए = कहा गया । देवो = देव ।

42 आरुहवि (आरुह) सक्र अपभ्रंश अतरप्पा (अतरप्प) 2/1 अपभ्रंश बहिरप्पा (बहिरप्प) 2/1 अपभ्रंश छडिऊण (छड) सक्र तिविहेण

(तिविह) 3/1 झाइज्जइ (झा) व कर्म 3/1 सक परमप्पा (परमप्पा) 1/1 उवइट्ठ (उवइट्ठ) 1/1 वि। जिणवरिंदेहि (जिणवरिंद) 3/2।

42 आरुहवि = ग्रहण करके। अंतरप्पा = अन्तरात्मा को। बहिरप्पा = बहिरात्मा को। छडिऊण = छोडकर। तिविहेण = तीन प्रकार से। झाइज्जइ = ध्याया जाता है। परमप्पा = परमात्मा। उवइट्ठ = कहा गया। जिणवरिंदेहि = अरहंतो द्वारा।

43 जो (ज) 1/1 सवि पस्सदि (पस्स) व 3/1 सक अप्पाणं (अप्पाण) 2/1 अबद्धपुट्ठ [(अबद्ध) + (अपुट्ठ)] [(अबद्ध) भूकृ अनि-(अपुट्ठ) भूकृ 2/1 अनि] अणण्णय (अणण्ण) 2/1 वि स्वार्थिक 'य' प्रत्यय णियद (णियद) 2/1 वि अविसेसमसंजुत्तं [(अविसेस) + (असजुत्त)] अविसेस (अविसेस) 2/1 वि असजुत्त (असजुत्त) भूकृ 2/1 अनि त (त) 2/1 सवि सुद्धनय (सुद्धनय) 2/1 वियाणाहि[1] (वियाण) विधि 2/1 सक।

1 आज्ञार्थक या विधि अर्थक प्रत्ययो के होने पर कभी-कभी अन्त्यस्थ 'अ' के स्थान पर 'आ' की प्राप्ति देखी जाती है (हेम-प्राकृत व्याकरण, 3–158 वृत्ति)

43 जो = जो। पस्सदि = देखता है। अप्पाण = आत्मा को। अबद्धपुट्ठ = बध से रहित, न छुआ हुआ। अणण्णय = अद्वितीय। णियद = स्थायी। अविसेसमसजुत्त = अविसेस + असजुत्त = भेद से रहित, अमिश्रित। त = उसको। सुद्धणय = शुद्धनय (को)। वियाणाहि = जानो।

44 अरसमरूवमगध [(अरस) + (अरूव) + (अगध)] अरस (अरस) 1/1 वि अरूव (अरूव) 1/1 वि अगध (अगध) 1/1 वि अव्वत्त (अव्वत्त) 1/1 वि चेयणागुणमसद्द [(चेयणा) + (गुण) + (असद्द)] [(चेयणा)-(गुण) 1/1] असद्द (असद्द) 1/1 वि जाणमलिंगग्गहण [(जाण) + (अलिंग) + (ग्गहण)] जाण (जाण) 1/1 [(अलिंग) वि-(ग्गहण) 1/1] जीवमणिद्दिट्ठसठाण [(जीव) + (अणिद्दिट्ठ) + (सठाण)] जीव (जीव) 1/1 [(अणिद्दिट्ठ) वि-(सठाण) 1/1]।

44 अरसमरूवमगध = अरस + अरूव + अगध = रसरहित, रूपरहित, गधरहित। अव्वत्त = अदृश्यमान। चेयणागुणमसद्द = चेतना, स्वभाव, शब्द-रहित। जाणमलिंगग्गहण = जाण + अलिंग + ग्गहण = ज्ञान, बिना किसी

चिह्न के, ग्रहण। जीवमणिद्दिट्ठसठाण = जीव + अणिद्दिट्ठ + सठाणं = आत्मा, अप्रतिपादित, आकार।

45 ववहारोऽभूदत्थो [(ववहारो) + (अभूदत्थो)] ववहारो (ववहार) 1/1 अभूदत्थो (अभूदत्थ) 1/1 वि भूदत्थो (भूदत्थ) 1/1 वि देसिदो (देस) भूकृ 1/1 दु (अ) = ही सुद्धणओ [(सुद्ध) वि - (णअ) 1/1] भूदत्थमस्सिदो [(भूदत्थ) + (अस्सिदो)] भूदत्थ[1] (भूदत्थ) 2/1 अस्सिदो (अस्सिदो) 1/1 भूकृ अनि खलु (अ) = ही सम्मादिट्ठी (सम्मादिट्ठी) 1/1 वि हवदि (हव) व 3/1 अक जीवो (जीव) 1/1।

1 कभी कभी सप्तमी के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है। (हेम-प्राकृत-व्याकरण, 3-137) या 'अस्सिद' कर्म के साथ कर्तृवाच्य मे प्रयुक्त होता है (आप्टे, सस्कृत-हिन्दी कोश)।

45 ववहारोऽभूदत्थो = व्यवहार, अवास्तविक। भूदत्थो = वास्तविक। देसिदो = कहा गया। दु = ही। सुद्धणओ = शुद्धनय। भूदत्थमस्सिदो = वास्तविकता पर आश्रित। खलु = ही। सम्मादिट्ठी = सम्यदृष्टि। हवदि = होता है। जीवो = जीव।

46 जीवे[1] (जीव) 7/1 कम्म (कम्म) 1/1 बद्ध (बद्ध) भूकृ 1/1 अनि पुट्ठ (पुट्ठ) भूकृ 1/1 अनि चेदि [(च) + (इदि)] च (अ) = और इदि (अ) = इस प्रकार ववहारणयभणिद [(ववहारणय)-(भण) भूकृ 1/1] सुद्धणयस्स (सुद्धणय) 6/1 दु (अ) = किन्तु अबद्धपुट्ठं [(अबद्ध) + (अपुट्ठ)] [(अबद्ध) भूकृ अनि—(अपुट्ठ) भूकृ 1/1 अनि] हवदि (हव) व 3/1 अक कम्म (कम्म) 1/1।

1 कभी कभी तृतीया के स्थान पर सप्तमी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है (हेम-प्राकृत-व्याकरण, 3-135)।

46 जीवे = जीव मे → जीव के द्वारा। कम्म = कम्म। बद्ध = बाँधा हुआ। पुट्ठ = पकडा हुआ। चेदि = और, इस प्रकार। ववहारणयभणिदं = व्यवहारनय के द्वारा, कहा गया। सुद्धणयस्स = शुद्धनय के। दु = ही। जीवे = जीव के द्वारा। अबद्धपुट्ठ = न बाँधा हुआ, न पकडा हुआ। हवदि = होता है। कम्म = कर्म।

47 कम्म (कम्म) 1/1 बद्धमबद्ध [(बद्ध) + (अबद्ध)] बद्ध (बद्ध) भूकृ 1/1 अनि अबद्ध (अबद्ध) भूकृ 1/1 अनि जीवे[1] (जीव) 7/1 एद (एद)

2/1 सवि तु (अ) = तो जाण (जाण) विधि 2/1 सक णयपक्ख [(णय) – (पक्ख) 2/1] णयपक्खातिक्कतो [(णय) + (पक्ख) + (अतिक्कतो)] [(णय) – (पक्ख) – (अतिक्कत) 1/1 वि] भण्णदि (भण्णदि) व कर्म 3/1 सक अनि जो (ज) 1/1 सवि सो (त) 1/1 सवि समयसारो (समयसार) 1/1 ।

1 कभी कभी तृतीया के स्थान पर सप्तमी का प्रयोग पाया जाता है (हेम प्राकृत व्याकरण, 3–155) ।

47 कम्म = कर्म । बद्धमवद्ध = वद्ध + अवद्ध = बाँधा गया, न बाँधा गया । जीवे = जीव मे → जीव के द्वारा । एद = इसको । तु = तो । जाण = जानो । णयपक्ख = नय की दृष्टि । णयपक्खातिक्कतो = नय की दृष्टि से अतीत । भण्णदि = कहा गया । जो = जो । सो = वह । समयसारो = समयसार ।

48 जीवो (जीव) 1/1 ववगदमोहो [(ववगद) भूकृ अनि—(मोह) 1/1] उवलद्धो[1] (उवलद्ध) भूकृ 1/1 अनि तच्चमप्पणो] (तच्च) + (अप्पणो)] तच्च (तच्च) 2/1 अप्पणो (अप्प) 6/1 सम्म (अ) = पूर्णत जहदि (जह) व 3/1 सक जदि (अ) = यदि रागदोसे [(राग)—(दोस) 2/2] सो (त) 1/1 सवि अप्पाण (अप्पाण) 2/1 लहदि (लह) व 3/1 सक सुद्धं (सुद्ध) भूकृ 2/1 अनि ।

1 'उवलद्ध' = इसका प्रयोग कर्तृवाच्य मे हुआ है । यह विचारणीय है ।

48 जीवो = व्यक्ति ने । ववगदमोहो = मोह समाप्त किया गया । उवलद्धो = प्राप्त किया । तच्चमप्पणो = तच्च + अप्पणो = सार को, आत्मा के । सम्म = पूर्णत । जहदि = छोड देता है । जदि = यदि । रागदोसे = राग-द्वेष को । सो = वह । अप्पाण = अपने । लहदि = प्राप्त कर लेता है → प्राप्त कर लेगा । सुद्ध = शुद्ध स्वरूप को ।

49 जो (ज) 1/1 सवि एव (अ) = इस प्रकार जाणित्ता (जाण) सक्र भादि (भा) व 3/1 सक पर (पर) 2/1 वि अप्पगं (अप्प) 2/1 स्वार्थिक 'ग' प्रत्यय विसुद्धप्पा [(विसुद्ध) वि-(अप्प) 1/1] सागाराणगारो [(सागार) + (अणगारो)] [सागार)-(अणगार) 1/1] खवेदि (खव) व 3/1 सक सो (त) 1/1 सवि मोहदुग्गंठि [(मोह)-दुग्गंठि) 2/1]।

49 जो = जो । एव = इस प्रकार । जाणित्ता = समझकर । भादि = ध्यान करता है । पर = उच्चतम (को) । अप्पगं = आत्मा को । विसुद्धप्पा = शुद्धात्मा । सागाराणगारो = सागार + अणगारो = गृहस्थ व मुनि । खवेदि = नष्ट कर देता है । सो = वह । मोहदुग्गंठि = मोह की जटिल गांठ को ।

50 णाहं [(ण) + अहं)] ण = नहीं अहं (अम्ह) 1/1 स होमि (हो) व 3/1 अक परेसिं (पर) 6/2 वि मे (अम्ह) 6/1 स परे[1] (पर) 2/2 वि सन्ति (अस) व 3/2 अक णाणमहमेक्को [(णाण) + (अहं) + (एक्को)] णाण (णाण) 1/1 अहं (अम्ह) 1/1 स एक्को (एक्क) 1/1 सवि इदि (अ) = इस प्रकार जो (ज) 1/1 सवि भायदि (भाय) व 3/1 सक भाणे (भाण) 1/1 सो (त) 1/1 सवि अप्पाणं (अप्पाण) 2/1 हवदि (हव) व 3/1 अक भादा (भाउ) 1/1 वि ।

1 कभी-कभी प्रथमा के स्थान पर द्वितीया का प्रयोग पाया जाता है । (हेम-प्राकृत व्याकरण, 3-137 वृत्ति) ।

50 णाहं = ण + अहं = नहीं, मैं । होमि = हूँ । परेसिं = पर के । ण = नहीं । मे = मेरे । परे = पर को→पर । सन्ति = हैं । णाणमहमेक्को = णाण + अहं + एक्को = ज्ञान, मैं, केवल मात्र । इदि = इस प्रकार । जो = जो । भायदि = ध्याता है । भाणे = ध्यान में । सो = वह । अप्पाणं = आत्मा को । हवदि = होता है । भादा = ध्याता ।

51 देहा (देह) 1/2 वा (अ) = एव दविणा (दविण) 1/2 सुहदुक्खा [(सुह)-(दुक्ख) 1/2] वाऽध [(वा) + (अध)] वा (अ) = एव अध (अ) = अच्छा तो सत्तुमित्तजणा [(सत्तु)-(मित्त)-(जण) 1/2] जीवस्स (जीव) 6/1 ण (अ) = नहीं सति (अस) व 3/2 अक धुवा (धुव) 1/2 वि धुवोवओगप्पगो [(धुव) + (उवओगप्पगो)] [(धुव) वि-(उवओगप्पगो) 1/1 वि] अप्पा (अप्प) 1/1 ।

51 देहा = शरीर । वा = एव । दविणा = धनादि वस्तुएँ । सुहदुक्खा = सुख और दु ख । वाऽध = वा + अध = एव, अच्छा तो । सत्तुमित्तजणा = शत्रु, मित्रजन । जीवस्स = व्यक्ति के । ण = नहीं । संति = रहते है । धुवा = स्थायी । धवोवओगप्पगो = ध्रुव + उवओगप्पगो = स्थायी, उपयोगमयी । अप्पा = आत्मा ।

52 एव=इस प्रकार णाणप्पाण (णाणप्पाण) 2/1 वि दसणभूद [(दसण)-(भूद) भूकृ 2/1 अनि] अदिदियमहत्थ [(अदिदिय)-(महत्थ) 2/1] धुवमचलमणालब [(धुव) + (अचल) + अणालव)] धुव (धुव) 2/1 वि अचल (अचल) 2/1 वि अणालव (अणालव) 2/1 वि मण्णेऽह [मण्णे) + (अह)] मण्णे (मण्णे) व 1/1 सक अनि अह (अम्ह) 1/1 स अप्पग (अप्प) 2/1 'ग' स्वार्थिक प्रत्यय सुद्ध (सुद्ध) 2/1 वि ।

52 एव = इस प्रकार । णाणप्पाण = ज्ञानस्वभाववाला । दसणभूद = दर्शनमयी । अदिदियमहत्थ = अतीन्द्रिय, श्रेष्ठ पदार्थ । धुवमचलमणालव = धुव + अचल + अणालव = स्थायी, स्थिर, आलवनरहित । मण्णेऽह = समझता हूँ, मैं । अप्पग=आत्मा को । सुद्ध = शुद्ध ।

53 आदा (आद) 1/1 णाणपमाण [(णाण)-(पमाण) 1/1] णाण (णाण) 1/1 णेयप्पमाणमुद्दिट्ठ [(णेय) + (प्पमाण) + (उद्दिट्ठ)] [(णेय) विधि कृ अनि-(प्पमाण) 1/1] उद्दिट्ठ (उद्दिट्ठ) भूकृ 1/1 अनि णेय (णेय) विधि कृ 1/1 अनि लोगालोग [(लोग) + (अलोग)] [(लोग)-(अलोग) 1/1] तम्हा (अ) = इसलिए णाण (णाण) 1/1 तु (अ) = तो सव्वगय [(सव्व) वि-(गय) भूकृ 1/1 अनि] ।

53 आदा = आत्मा । णाणपमाण=ज्ञान जितना । णेयप्पमाणमुद्दिट्ठ = णेय + प्पमाण + उद्दिट्ठ = ज्ञेय, जितना, कहा गया । णेय = ज्ञेय । लोगालोग = लोग + अलोग = लोक, अलोक । तम्हा = इसलिए । णाण = ज्ञान । तु-(अ) = तो । सव्वगय = सब जगह विद्यमान ।

54 णाण (णाण) 1/1 अप्पत्ति [(अप्प) + (इति)] अप्प[1] (अप्प) 1/1 इति (अ) = इस प्रकार मदं (मद) भूकृ 1/1 अनि वट्टदि (वट्ट) व 3/1 अक णाण (णाण) 1/1 विणा[2] (अ) = बिना ण (अ) = नही अप्पाण[2] (अप्पाण) 2/1 तम्हा (अ) = इसलिए णाण (णाण) 1/1 अप्पा (अप्प) 1/1 अप्पा (अप्प) 1/1 णाण (णाण) 1/1 व (अ) = तथा अण्ण (अण्ण) 1/1 वि वा (अ) = भी ।

1 यहा 'अप्पा' का 'अप्प' हुआ है। आगे 'त्ति' सयुक्त अक्षर होने से अप्पा का अप्प हुआ है (हेम-प्राकृत-व्याकरण, 1–84)।

2 विना के योग मे द्वितीया, तृतीया या पचमी विभक्ति होती है।

54 णाण = ज्ञान। अप्पत्ति = आत्मा, इस प्रकार। मदं = स्वीकृत। वट्टदि = होता है। णाण = ज्ञान। विणा = विना। ण = नही। अप्पाणं = आत्मा के। तम्हा = इसलिए। णाणं = ज्ञान। अप्पा = आत्मा। अप्पा = आत्मा। णाण = ज्ञान। व = तथा। अण्ण = अन्य। वा = भी।

55 जो = (ज) 1/1 सवि जाणदि (जाण) व 3/1 सक सो (त) 1/1 सवि णाणं (णाण) 1/1 ण (अ) = नही हवदि (हव) व 3/1 अक णाणेण (णाण) 3/1 जाणगो (जाणग) 1/1 वि आदा (आद) 1/1 णाण (णाण) 1/1 परिणमदि (परिणम) व 3/1 अक सय (अ) = स्वयं अट्ठा (अट्ठ) 1/2 णाणट्ठिया [(णाण)–(ट्ठिय) भूकृ 1/2 अनि] सव्वे (सव्व) 1/2 वि।

55 जो = जो। जाणदि = जानता है। सो = वह। णाण = ज्ञान। ण (अ) = नही। हवदि = होता है। णाणेण = ज्ञान के द्वारा। जाणगो = जानने-वाला। आदा = आत्मा। णाणं = ज्ञान। परिणमदि = रूपान्तरित होता है। सय = स्वय। अट्ठा = पदार्थ। णाणट्ठिया = ज्ञान मे स्थित। सव्वे = सब।

56 तिक्कालणिच्चविसम [(तिक्काल)–(णिच्च)–(विसम) 1/1 वि] सयलं (सयल) 2/1 वि सव्वत्थ (अ) = हर समय सभव (सभव) 2/1 चित्त (चित्त) 2/1 वि जुगव (अ) = एक साथ जाणदि (जाण) व 3/1 सक जोण्ह (जोण्ह) 1/1 अहो (अ) = हे मनुष्यो! हि (अ) निश्चयपूर्वक णाणस्स (णाण) 6/1 माहप्प (माहप्प) 1/1।

56 तिक्कालणिच्चविसमं = तीनो कालो मे, अविनाशी, अनुपम। सयल = सम्पूर्ण को। सव्वत्थ = हर समय। सभव = समावनाओ को। चित्त = विविध (को)। जुगव = एक साथ। जाणदि = जानता है। जोण्ह = प्रकाश। अहो = हे। हि = निश्चयपूर्वक। णाणस्स = ज्ञान की। माहप्प = महिमा।

57 णत्थि (अ) = नही है परोक्ख (परोक्ख) 1/1 किंचिवि (अ) = कुछ भी समत (अ) = सब ओर से सव्वक्खगुणसमिद्धस्स [(सव्व)+

(अक्ख) + (गुण) + (समिद्धस्स)] [(सव्व) - (अक्ख) - (गुण) - (समिद्ध) भूकृ 4/1 अनि) अक्खातीदस्स [(अक्ख) + (अतीदस्स)] [(अक्ख) - (अतीद) 4/1] सदा (अ) = सदा सयमेव [(सय) + (एव)] सय(अ) = स्वय एव (अ) = ही हि (अ) = निस्सदेह णाणजादस्स [(णाण) - (जाद) भूकृ 4/1]।

57 णत्थि=नही है। परोक्ख = परोक्ष। किंचिवि = कुछ भी। समत = सब ओर से। सव्वक्खगुणसमिद्धस्स = सब इन्द्रियो के गुणो से सम्पन्न (व्यक्ति) के लिए। अक्खातीदस्स = सब इन्द्रियो से परे पहुँचे हुए (ज्ञान) के लिए। सदा = सदा। सयमेव = स्वय ही। हि=निस्सदेह। णाणजादस्स = ज्ञान को प्राप्त (व्यक्ति) के लिए।

58. गेण्हदि (गेण्ह) व 3/1 सक णेव (अ) = न ही ण (अ) = न मुचदि (मुच) व 3/1 सक पर (पर) 2/1 वि परिणमदि (परिणम) व 3/1 अक केवली (केवलि) 1/1 भगव (भगव) 1/1 पेच्छदि (पेच्छ) व 3/1 सक समतदो (अ) = सब ओर से सो (त) 1/1 सवि जाणदि (जाण) व 3/1 सक सव्व (सव्व) 2/1 सवि णिरवसेस (क्रिविअ) = पूर्ण रूप से।

58 गेण्हदि = करता है→ करते हैं। णेव = न ही। ण = न। मुचदि = छोडते है। ण = नही। परिणमदि = रूपान्तरित होते हैं। केवली = केवली। भगव = भगवान। पेच्छदि = देखते है। समतदो = सब ओर से। सो = वह→ वे। जाणदि = जानते हैं। सव्व = सब को। णिरवसेस = पूर्ण रूप से।

59 सोक्ख (सोक्ख) 1/1 वा (अ) = अथवा पुण (अ) = पादपूरक दुक्ख (दुक्ख) 1/1 केवलणाणिस्स (केवलणाणि) 6/1 णत्थि (अ) = नही है→ होता है देहगद [(देह) - (गद) भूकृ 1/1 अनि] जम्हा (अ) = चूकि अदिंदियत्त (अदिंदियत्त) 1/1 जाद (जा) भूकृ 1/1 तम्हा (अ) = इसलिए दु (अ) = ही त (त) 1/1 सवि णेय (णेय) विधि कृ 1/1 अनि।

59 सोक्खं = सुख। वा = अथवा। पुण (अ) = पादपूरक। दुक्ख = दु ख। केवलणाणिस्स = केवलज्ञानी के। णत्थि = नही होता है। देहगद = शरीर के द्वारा प्राप्त। जम्हा = चूकि। अदिंदियत्त = अतीन्द्रियता। जाद =

उत्पन्न हुई। तम्हा = इसलिए। दु = ही। त = वह। णेय = समझने योग्य।

60 अत्थि (अ) = है अमुत्त (अमुत्त) 1/1 वि मुत्त (मुत्त) 1/1 वि अदिंदिय (अदिंदिय) 1/1 वि इदिय (इदिय) 1/1 वि च (अ) = तथा अत्थेसु (अत्थ) 7/2 णाण (णाण) 1/1 च (अ) = और तधा (अ) = इसी तरह सोक्ख (सोक्ख) 1/1 ज (ज) 1/1 सवि तेसु (त) 7/2 स पर (पर) 1/1 वि च (अ) = इसलिए त (त) 1/1 सवि णेय (णेय) विधि कृ 1/1 अनि।

60 अत्थि (अ) = है। अमुत्त = मूर्च्छारहित। मुत्त = मूर्च्छायुक्त। अदिंदिय = अतीन्द्रिय। इदिय = इन्द्रिय-ज्ञान। च = तथा। अत्थेसु = पदार्थों के विषय मे। णाण = ज्ञान। च तधा = और इसी तरह। सोक्खं = सुख। ज = जो। तेसु = उनमे। पर = श्रेष्ठ। च = इसलिए। त = वह। णेय = समझने योग्य।

61 ज (ज) 1/1 सवि केवलत्ति [(केवल) + (इति)] केवल (केवल) मूल शब्द 1/1 वि इति (अ) स्पष्टीकरण णाण (णाण) 1/1 त (त) 1/1 सवि सोक्ख (सोक्ख) 1/1 परिणम[1] (परिणम) 2/1 च = निस्सन्देह सो (त) 1/1 सवि चेव = ही खेदो (खेद) 1/1 तस्स (त) 6/1 स ण (अ) = नही भणिदो (भण) भूकृ 1/1 जम्हा (अ) = चूंकि घादी (घादि) 1/2 वि खय (खय) 2/1 जादा (जा) भूकृ 1/2।

1 द्वितीया का प्रयोग प्रथमा अर्थ मे हुआ है। (हेम प्राकृत व्याकरण, वृत्ति 3-137) तथा परिणाम का परिणम किया गया है (हेम प्रा व्या. वृत्ति 1-67)

61 ज = जो। केवल = केवल। णाण = ज्ञान। त = वह। सोक्ख = सुख। परिणम = रूपान्तरण। च = निस्सदेह। सो = वह। चेव = ही। खेदो = खेद। तस्स = उसके। ण = नही। भणिदो = कहा गया। जम्हा = चूंकि। घादी = घातिया कर्म। खय = क्षय को। जादा = प्राप्त हुए हैं।

62 जाद (जाद) भूकृ 1/1 अनि सय (अ) = आप से आप समत्तं (अ) = पूर्ण णाणमणतत्थवित्थिद [(णाण) + (अणत) + (अत्थ) + (वित्थिद)] णाण (णाण) 1/1 [(अणत) वि – (अत्थ) – (वित्थिद) 1/1 वि] विमल (विमल) 1/1 वि रहिद (रहिद) 1/1 वि तु (अ) = और

उग्गहादिहि [(उग्गह) + (आदिहि)] [(उग्गह) - (आदि) 3/2] सुहत्ति [(सुह) + (इति)] सुह (सुह) मूलशब्द 1/1 इति (अ) = स्पष्टीकरण एयतिय (एयतिय) 1/1 वि भणिद (भण) भूकृ 1/1 ।

62 जाद = उत्पन्न हुआ । सय = आप से आप । समत्त = पूर्ण । णाणमणतत्थ-वित्थिद = णाण + अणत + अत्थ + वित्थिद = ज्ञान, अनन्त पदार्थों मे फैला हुआ । विमल = शुद्ध । रहिद = रहित । तु = और । उग्गहादिहि = अवग्रह आदि से । सुहत्ति = सुख । एयतिय = अद्वितीय । भणिद = कहा गया ।

63 जादो (जा) भूकृ 1/1 सय (अ) = स्वय स (त) 1/1 सवि चेदा (चेदा) 8/1 सव्वण्हू (सव्वण्हु) 1/1 सव्वलोगदरसी [(सव्व) - (लोग) - (दरसि) 1/1 वि] य (अ) = और पप्पोदि (पप्पोदि) व 3/1 सक अनि सुहमणत [(सुह) + (अणत)] सुह (सुह) 2/1 अणत (अणत) 2/1 वि अव्वाबाध (अव्वाबाध) 2/1 वि सगममुत्त [(सग) + (अमुत्त)] सग (सग) 2/1 वि अमुत्त (अमुत्त) 2/1 वि ।

63 जादो = हुआ । सय = स्वय । स = वह । चेदा = हे मनुष्य । सव्वण्हू = जिन । सव्वलोगदरसी = सब लोक को देखनेवाला । य = और । पप्पोदि = प्राप्त करता है । सुहमणतं = सुख, अनन्त । अव्वाबाध = बाधा-रहित । सगममुत्त = सग + अमुत्त = निजी, इन्द्रियातीत ।

64 तिमिरहरा [(तिमिर) - (हर → हरा स्त्री) 1/1 वि] जइ (अ) = यदि दिट्ठी (दिट्ठी) 1/1 जणस्स (जण) 6/1 दीवेण (दीव) 3/1 णत्थि (अ) = नही कादव्व (का) विधि कृ 1/1 तध (अ) = उसी प्रकार सोक्ख (सोक्ख) 1/1 सयमादा [(सय) + (आदा)] सय (अ) = स्वय आदा (आद) 1/1 विसया (विसय) 1/2 किं (क) 1/1 सवि तत्थ (अ) = वहा पर कुव्वति (कुव्व) व 3/2 सक ।

64 तिमिरहरा = अधेपन को हटानेवाली । जइ = यदि । दिट्ठी = आख । जणस्स = मनुष्य की । दीवेण = दीपक के द्वारा । णत्थि = नही । कादव्व = किये जाने योग्य । तध = उसी प्रकार । सोक्ख = सुख । सयमादा = स्वय आत्मा । विसया = विषय । किं = क्या प्रयोजन । तत्थ = वहा । कुव्वति = करते हैं → करेंगे ।

तिमिर = अधापन, आप्टे, सस्कृत हिन्दी कोश ।

65 सयमेव [(सय) + (एव)] सय (अ) = स्वय एव (अ) = ही जधादिच्चो [(जधा) + (आदिच्चो)] जहा (अ) = जिम प्रकार आदिच्चो (आदिच्च) 1/1 तेजो (तेज) 1/1 उण्हो (उण्ह) 1/1 य (अ) = तथा देवदा (देवदा) 1/1 णभसि (णभसि) 7/1 अनि सिद्धोवि [(सिद्धो) + (अपि)] सिद्धो (सिद्ध) 1/1 अपि (अ) = भी तधा = उसी प्रकार णाणं (णाण) 1/1 सुह (सुह) 1/1 च (अ) = और लोगे (लोग) 7/1 तधा (अ) = तथा देवो (देव) 1/1 वि।

65 सयमेव = स्वय ही। जधादिच्चो = जिम प्रकार सूर्य। तेजो = प्रकाश। उण्हो = उष्ण। य = तथा। देवदा = दिव्य शक्ति। णभसि = आकाश मे। सिद्धोवि = सिद्ध भी। तधा = उसी प्रकार। णाणं = ज्ञान। सुह = सुख। च = और। लोगे = लोक मे। तधा = तथा। देवो = दिव्य।

66 परिणमदि (परिणम) व 3/1 अक जदा (अ) = जव अप्पा (अप्प) 1/1 सुहम्मि (सुह) 7/1 असुहम्मि (असुह) 7/1 रागदोसजुदो [(राग)-(दोस)-(जुद) भूकृ 1/1 अनि] त[1] (त) 2/1 सवि पविसदि (पविस) व 3/1 सक कम्मरय [(कम्म)-(रय) 1/1] णाणावरणादिभावेहिं [(णाणावरण) + (आदि) + (भावेहिं)] [(णाणावरण)-(आदि)-(भाव) 3/2]

1 'गमन' अर्थवाली क्रिया (पविसदि) के साथ द्वितीया हुआ है।

66 परिणमदि = रूपान्तरित होता है। जदा = जव। अप्पा = आत्मा। सुहम्मि = शुभ मे। असुहम्मि = अशुभ मे। रागदोसजुदो = राग-द्वेष से जकडा हुआ। त = उसको→उसमे। पविसदि = प्रवेश करता है। कम्मरय = कर्मरज। णाणावरणादिभावेहिं = ज्ञानावरणादि रूप परिणामो द्वारा।

67 ज (ज) 2/1 सवि कुणदि (कुण) व 3/1 सक भावमादा [(भाव) + (आदा)] भाव (भाव) 2/1 आदा (आद) 1/1 कत्ता (कत्तु) 1/1 वि सो (त) 1/1 सवि होदि (हो) व 3/1 अक तस्स (त) 6/1 स भावस्स (भाव) 6/1 कम्मत्त (कम्मत) 2/1 परिणमदे (परिणम) व 3/1 सक तम्हि (त) 7/1 स सय (अ) = अपने आप पोग्गल (पोग्गल) 1/1 दव्व (दव्व) 1/1।

67 जं = जिस (को) । कुणदि = उत्पन्न करता है । भावमादा = भाव को, आत्मा । कत्ता = कर्ता । सो = वह । होदि = होता है । तस्स = उस (का) । भावस्स = भाव का । कम्मत्त = कर्मत्व को । परिणमदे = प्राप्त करता है । तम्हि = उसके होने पर । सय = अपने आप । पोग्गल = पुद्गल । दव्व = द्रव्य ।

68 अण्णाणी (अण्णाणि) 1/1 वि पुण (अ) = और रत्तो (रत्त) भूकृ 1/1 अनि हि (अ) = निस्सन्देह सव्वदव्वेसु [(सव्व)-(दव्व) 7/2] कम्ममज्झगदो [(कम्म)-(मज्झ)-(गद) भूकृ 1/1 अनि] लिप्पदि (लिप्पदि) व कर्म 3/1 सक अनि कम्मरयेण [(कम्म)-(रय) 3/1] दु (अ) = अत कद्दममज्झे [(कद्दम)-(मज्झ) 7/1] जहा (अ) = जिस प्रकार लोह (लोह) 1/1 ।

68 अण्णाणी = अज्ञानी । पुण = और । रत्तो = आसक्त । हि = निस्सन्देह । सव्वदव्वेसु = सब वस्तुओ मे । कम्ममज्झगदो = कर्म के मध्य मे फसा हुआ । लिप्पदि = मलिन किया जाता है । कम्मरयेण = कर्मरूपी रज से । दु = अत । कद्दममज्झे = कीचड मे (पडा हुआ) । जहा = जिस प्रकार । लोह = लोहा ।

69 आदा (आद) 1/1 कम्ममलिमसो [(कम्म) - (मलिमस) 1/1 वि] धारदि (धार) व 3/1 सक पाणे (पाण) 2/2 पुणो पुणो (अ) = बार-बार अण्णे (अण्ण) 2/2 वि ण (अ) = नही जहदि (जह) व 3/1 सक जाव = जब तक ममत्त (ममत्त) 2/1 देहपधाणेसु [(देह) - (पधाण) 7/2 वि] विसएसु (विसअ) 7/2 ।

69 आदा = आत्मा । कम्ममलिमसो = कर्मो से मलिन । धारदि = धारण करती है । पाणे = प्राणो को । पुणो पुणो = बार-बार । अण्णे = नवीन । ण = नही । जहदि = छोडती है । जाव = जब तक । ममत्त = ममत्व को । देहपधाणेसु = मूल मे शरीर । विसएसु = विषयो मे ।

70 वत्थु (वत्थु) 2/1 पडुच्च (अ) = आश्रय करके त (त) 1/1 सवि पुण (अ) = फिर अज्झवसाण (अज्झवसाण) 1/1 तु (अ) = निस्सदेह होदि (हो) व 3/1 अक जीवाण (जीव) 6/2 ण (अ) = नही हि (अ) = वास्तव मे वत्थुदो (वत्थु) पचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय दु (अ) =

तो भी वधो (वध) 1/1 अज्झवसाणेण (अज्झवसाण) 3/1 बधो (वध) 1/1 त्ति (अ) = अत ।

70 वत्थु = वस्तु को । पडुच्च = आश्रय करके । त = वह । पुण = फिर । अज्झवसाण = विचार । तु = निस्सदेह । होदि = होता है । जीवाण = जीवो के । ण = नही । हि = वास्तव मे । वत्थुदो = वस्तु मे । दु = तो भी । वधो = वध । अज्झवसाणेण = विचार से । बधो = वध । त्ति = अत ।

71 रत्तो (रत्त) भूकृ 1/1 अनि वधदि (वध) व 3/1 सक कम्म (कम्म) 1/1 मुच्चदि (मुच्चदि) व कर्म 3/1 सक अनि कम्मेहि (कम्म) 3/2 रागरहिदप्पा [(राग) + (रहिद) + (अप्पा)] [(राग) – (रहित) वि – (अप्प) 1/1] एसो (एत) 1/1 सवि वधसमासो [(वध) – (समास) 1/1] जीवाण (जीव) 6/2 जाण (जाण) विधि 2/1 सक णिच्छयदो (णिच्छय) पचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय ।

71 रत्तो = आसक्त । वधदि = वाधता है । कम्म = कर्म को । मुच्चदि = छुटकारा पा जाता है । कम्मेहि = कर्मों से । रागरहिदप्पा = आसक्ति से रहित व्यक्ति । एसो = यह । वधसमासो = वध का सक्षेप । जीवाण = जीवो के । जाण = समझो । णिच्छयदो = निस्सदेह ।

72 जो (ज) 1/1 सवि इदियादिविजई [(इदिय) + (आदि) + (विजइ)] [(इदिय) – (आदि) – (विजइ) 1/1 वि] भवीय (भव) सकृ उवओगमप्पग [(उवओग) + (अप्पग)] उवओग (उवओग) 2/1 अप्पग (अप्प) 2/1 स्वार्थिक 'ग' प्रत्यय झादि (झा) व 3/1 सक कम्मेहि (कम्म) 3/2 सो (त) 1/1 सवि ण (अ) = नही रजदि (रजदि) व कर्म 3/1 सक अनि किह (अ) = कैसे त (त) 2/1 सवि पाणा (पाण) 1/2 अणुचरति (अणुचर) व 3/2 सक ।

72 जो = जो । इदियदिविजई = इन्द्रियादि का विजेता । भवीय = होकर । उवओगमप्पग = उवओग + अप्पग = उपयोगमयी, आत्मा को । झादि = ध्याता है । कम्मेहि = कर्मों के द्वारा । सो = वह । ण (अ) = नही । रजदि = रगा जाता है । किह = कैसे । त = उसको । पाणा = प्राण । अणुचरति = अणुसरण करते है→ करेगे ।

73 परिणमदि (परिणाम) व 3/1 अक णेयमट्ठ [(णेय) + (अट्ठ)] णेय[1] (णेय) विधि कृ 2/1 अनि अट्ठ[1] (अट्ठ) 2/1 णादा (णाउ) 1/1 वि जदि = यदि णेव (अ) = कभी नहीं खाइग (खाइग) 1/1 वि तस्स (त) 6/1 स णाणत्ति [(णाण) + (इति)] णाण (णाण) 1/1 इति (अ) = इसलिए तं (त) 2/1 सवि जिणिंदा (जिणिंद) 1/2 खवयत[2] (खवय) वकृ 2/1 अनि कम्ममेवुत्ता [(कम्म) + (एव) + (उत्ता)] कम्म (कम्म) 2/1 एव (अ) = ही उत्ता[3] (उत्त) भूकृ 1/2 अनि।

1 कभी-कभी सप्तमी के स्थान पर द्वितीया का प्रयोग पाया जाता है। (हे प्रा व्या 3-137)

प्रे वकृ
2 क्षप्→ क्षपय्→ क्षपयत्→ क्षपयन्त (2/1)→ खवयत (2/1अनि)

3 यहा 'उत्ता' का प्रयोग कर्तृवाच्य मे हुआ है।

73 परिणमदि = रूपान्तरित होता है। णेयमट्ठ = णेय + अट्ठ = जानने योग्य पदार्थ = ज्ञेय। णादा = ज्ञाता। जदि = यदि। णेव = कभी नहीं। खाइग = कर्मों के क्षय से उत्पन्न। तस्स = उसका। णाण = ज्ञान। इति = इसलिए। त = उसको। जिणिंदा = जिनेन्द्रो ने। खवयत = क्षय करता हुआ। कम्ममेवुत्ता = कम्म + एव + उत्ता = कर्मों को, ही, कहा।

74 ज (ज) 2/1 सवि भाव (भाव) 2/1 सुहमसुह [(सुह) + (असुह)] सुह (सुह) 2/1 वि असुह (असुह) 2/1 वि करेदि (कर) व 3/1 सक आदा (आद) 1/1 स (त) 1/1 सवि तस्स (त) 6/1 स खलु (अ) = निस्सदेह कत्ता (कत्तु) 1/1 वि त (त) 1/1 सवि तस्स (त) 6/1 स होदि (हो) व 3/1 अक कम्म (कम्म) 1/1 सो (त) 1/1 सवि तस्स (त) 6/1 स दु (अ) = ही वेदगो (वेदग) 1/1 वि अप्पा (अप्प) 1/1।

74 ज = जिस (को)। भाव = भाव को। सुहमसुह = शुभ-अशुभ। करेदि = करता है। आदा = आत्मा। स = वह। तस्स = उसका। खलु = निस्सदेह। कत्ता = कर्त्ता। त = वह। तस्स = उसका। कम्म = कर्म। सो = वह। तस्स = उसका। दु = ही। वेदगो = भोक्ता। अप्पा = आत्मा।

75 ज (ज) 2/1 सवि कुणदि (कुण) व 3/1 सक भावमादा [(भाव) + (आदा)] भाव (भाव) 2/1 आदा (आद) 1/1 कत्ता (कत्तु) 1/1 वि सो (त) 1/1 सवि होदि (हो) व 3/1 अक तस्स (त) 6/1 स कम्मस्स (कम्म) 6/1 णाणिस्स (णाणि) 6/1 वि दु (अ) = पादपूर्ति

गाणमश्रो (णाणमग्र) 1/1 वि श्रण्णाणमश्रो (श्रण्णाणमश्र) 1/1 वि श्रण्णाणिस्स (श्रणाणि) 6/1 वि ।

75 ज = जो । कुणदि = उत्पन्न करता है । भावमादा = भाव को, श्रात्मा । कत्ता = कर्ता । सो = वह । होदि = होता है । तस्स = उस (का) । कम्मस्स = कर्म का । णाणिस्स = ज्ञानी का । णाणमश्रो = ज्ञानमय । श्रण्णाणमश्रो = श्रज्ञानीमय । श्रणाणिस्स = श्रज्ञानी का ।

76-77 कणयमया (कणयमय) 5/1 वि भावादो (भाव) 5/1 जायते (जाय) व 3/2 श्रक कुडलादयो [(कुडल) + (श्रादयो)] [(कुडल)–(श्रादि) 1/2] भावा (भाव) 1/2 श्रयमयया (श्रयमय) 5/1 वि स्वार्थिक 'य' प्रत्यय जह (श्र) = जैसे दु (श्र) = श्रौर फडयादी [(कडय) + (श्रादी)] [(कडय) + (श्रादि) 1/2)]

श्रण्णाणमया (श्रण्णाणमय) 1/2 भावा (भाव) 1/2 श्रणाणिणो (श्रणाणि) 6/1 बहुविहा (बहुविह) 1/2 वि (श्र) = ही जायते (जाय) व 3/2 श्रक णाणिस्स (णाणि) 6/1 दु (श्र) = तथा णाणमया (णाणमय) 1/2 सव्वे (सव्व) 1/2 सवि तहा (श्र) = वैसे ही होंति (हो) व 3/2 श्रक ।

76-77 कणयमया = कनकमय । भावादो = वस्तु से । जायते = उत्पन्न होती है । कुंडलादयो = कुण्डल श्रादि । भावा = वस्तुएँ । श्रयमयया = लोहमय । भावादो = वस्तु से । जह = जैसे । जायते = उत्पन्न होती है । दु = श्रौर । फडयादी = कडे श्रादि ।

श्रण्णाणमय = श्रज्ञानमय । भावा = भाव । श्रणाणिणो = श्रज्ञानी के । बहुविहा = श्रनेक प्रकार के । वि = ही । जायते = उत्पन्न होते है । णाणिस्स = ज्ञानी के । दु = तथा । णाणमया = ज्ञानमय । सव्वे = सभी । भावा = भाव । तहा = वैसे ही । होंति = होते हैं ।

78 णिच्छयणयस्स (णिच्छयणय) 6/1 एव (श्र) = इस प्रकार श्रादा (श्राद) 1/1 श्रप्पाणमेव [(श्रप्पाण) + (एव)] श्रप्पाण (श्रप्पाण) 2/1 एव (श्र) = ही हि (श्र) = पादपूरक करेदि (कर) व 3/1 सक वेदयदि (वेदयदि) व 3/1 सक श्रनि पुणो (श्र) = तथा त (त) 2/1 सवि चेव (श्र) ही जाण (जाण) विधि 2/1 सक श्रत्ता (श्रत्त) 1/1 दु (श्र) = ही श्रत्ताण (श्रत्ताण) 2/1 ।

78 णिच्छयणयस्स = निश्चयनय के । एवं = इस प्रकार । आदा = आत्मा । अप्पाणमेव = आत्मा को ही । करेदि = करता है । वेदयदि = भोगता है । पुणो = तथा । त = उसको । चेव = ही । जाण = जानो । अत्ता = आत्मा । दु = ही । अत्ताण = आत्मा को ।

79 ववहारस्स (ववहार) 6/1 दु (अ) = किन्तु आदा (आद) 1/1 पोग्गल-कम्म [(पोग्गल)-(कम्म) 2/1] करेदि (कर) व 3/1 सक णेयविह (णेयविह) 2/1 वि त (त) 2/1 सवि चेव (अ) = ही य (अ) = तथा वेदयदे (वेदयदे) व 3/1 सक अणेयविह (अणेयविह) 2/1 वि।

79 ववहारस्स = व्यवहारनय के । दु = किन्तु । आदा = आत्मा । पोग्गलकम्म = पुदगल कर्म को । करेदि = करता है । णेयविह = अनेक प्रकार के । त = उस (को) । चेव = ही । य = तथा । वेदयदे = भोगता है । पोग्गलकम्म = पुद्गलकर्म को । अणेयविह = अनेक प्रकार के ।

80 अप्पा (अप्प) 1/1 उवओगप्पा [(उवओग) + (अप्पा)] [(उवओग)-(अप्प) 1/1] उवओगो (उवओग) 1/1 णाणदसण [(णाण)-(दसण) 1/1] भणिदो (भण) भूकृ 1/1 सो (त) 1/1 सवि हि (अ) = पादपूरक सुहो (सुह) 1/1 वि असुहो (असुह) 1/1 वि वा (अ) = अथवा अप्पणो (अप्प) 6/1 हवदि (हव) व 3/1 अक।

80 अप्पा = आत्मा । उवओगप्पा = उपयोग स्वभाववाला । उवओगो = उपयोग । णाणदसण = ज्ञान-दर्शन । भणिदो = कहा गया । सो = वह । सुहो = शुभ । असुहो = अशुभ । वा = अथवा । उवओगो = उपयोग । अप्पणो = आत्मा का । हवदि = होता है ।

81 जदि (अ) = यदि सो (त) 1/1 सवि सुहो (सुह) 1/1 व (अ) = अथवा असुहो (असुह) 1/1 ण (अ) = नही हवदि[1] (हव) व 3/1 अक आदा (आद) 1/1 सय = स्वय सहावेण [(स)वि-(हाव) 3/1] ससारोवि [(ससारो) + (अवि)] ससारो (ससार) 1/1 अपि = ही ण = नही विज्जदि[1] (विज्ज) व 3/1 अक सव्वेसिं (सव्व) 6/2 सवि जीवकायाण (जीवकाय) 6/2 ।

1 हेतुसूचक वाक्यो मे विधिलिंग के स्थान पर प्राय वर्तमान काल का प्रयोग होता है ।

81 जदि = यदि । सो = वह । सुहो = शुभ रूप । वं = अथवा । असुहो = अशुभ रूप । ण = नही । हवदि = होता है→ होवे । आदा = आत्मा । सय = स्वय । सहावेण = अपने भाव से । ससारोवि = ससार ही । ण = न । विज्जदि = होता है→ होवे । सव्वेसि = किसी भी । जीवकायाण = जीव के ।

82 देवदजदिगुरुपूजासु [(देवद)[1]–(जदि)–(गुरु)–(पूजा) 7/2] चेव (अ) = तथा दाणम्मि (दाण) 7/1 वा (अ) = तथा सुसीलेसु (सुसील) 7/2 उववासादिसु [(उववास) + (आदिसु)] [(उववास)–(आदि) 7/2 अनि] रत्तो (रत्त) भूकृ 1/1 अनि सुहोवओगप्पगो [(सुह) + (उवओग) + (अप्पगो)] [(सुह)–(उवओग)–(अप्पग) 1/1 वि] अप्पा (अप्प) 1/1 ।

1 देवदा' के स्थान पर 'देवद' हुआ है, समास मे दीर्घ का ह्रस्व हो सकता है । (हे प्रा व्या 1–67)

82 देवदजदिगुरुपूजासु = देव, साधु, गुरु की भक्ति मे । चेव = तथा । दाणम्मि = दान मे । वा = तथा । सुसीलेसु = शीलो मे । उववासादिसु = उपवास आदि मे । रत्तो = सलग्न । सुहोवओगप्पगो = शुभोपयोगवाला । अप्पा = आत्मा ।

83 सुहपरिणामो [(सुह) वि–(परिणाम) 1/1] पुण्ण (पुण्ण) 1/1 असुहो (असुह) 1/1 वि पावत्ति [(पाव) + (इति)] पाव (पाव) 1/1 इति = शब्दस्वरूपद्योतक हवदि (हव) व 3/1 अक जीवस्स (जीव) 6/1 दोण्ह[1] (दो) 6/2 वि पोग्गलमेत्तो [(पोग्गल)–(मेत्त) 1/1] भावो (भाव) 1/1 कम्मत्तण (कम्मतण) 2/1 पत्तो (पत्त) भूकृ 1/1 अनि ।

1 षष्ठी का प्रयोग तृतीया के स्थान पर हुआ है (हे प्रा व्या 3-134) ।

83 सुपरिणामो = शुभ परिणाम । पुण्ण = पुण्य । असुहो = अशुभ । पाव = पाप । हवदि = होता है । जीवस्स = जीव का । दोण्ह = दोनो कारणो से । पोग्गलमेत्तो = पुद्गल की राशि । भावो = भाव ने । कम्मत्तण = कर्मत्व को । पत्तो = प्राप्त किया ।

84 रागो (राग) 1/1 जस्स (ज) 6/1 स पसत्थो (पसत्थ) 1/1 वि अणुकपाससिदो [(अणुकपा)–(ससिद) भूकृ 1/1 अनि] य (अ) = तथा परिणामो (परिणाम) 1/1 चित्तम्हि (चित्त) 7/1 णत्थि (अ) = नही है

कलुस (कलुस) 1/1 पुण्ण (पुण्ण) 2/1 जीवस्स (जीव) 6/1 आसवदि (आसव) व 3/1 सक।

84 रागो = राग। जस्स = जिसके। पसत्थ = शुभ। अणुकंपासंसिदो = अनुकंपा पर आश्रित। य = तथा। चित्तम्हि = चित्त में। णत्थि = नहीं। कलुस = मलिनता। पुण्ण = पुण्य। जीवस्स = जीव के। आसवदि = आगमन होता है।

85 अरहंतसिद्धसाहुसु [(अरहंत)-(सिद्ध)-(साहु) 7/2 अनि] भत्ती (भत्ति) 1/1 धम्मम्मि (धम्म) 7/1 जा (जा) 1/1 सवि य (अ) = तथा खलु (अ) = वाक्यालंकार चेट्ठा (चेट्ठा) 1/1 अणुगमण (अणुगमण) 1/1 पि (अ) = पादपूर्ति गुरुण (गुरु) 6/2 पसत्थरागो [(पसत्थ) भूकृ अनि-(राग) 1/1] त्ति (अ) = समाप्तिसूचक वुच्चति (वुच्चति) व कर्म 3/2 सक अनि।

85 अरहंतसिद्धसाहुसु = अरहंतों, सिद्धों और साधुओं में। भत्ती = भक्ति। धम्मम्मि = धर्म में। जा = जो। य = तथा। चेट्ठा = प्रवृत्ति। अणुगमण = अनुसरण। गुरुणं = पूज्य व्यक्तियों का। पसत्थरागो = शुभ राग। वुच्चति = कहा जाता है।

86 तिसिद (तिसिद) भूकृ 2/1 अनि बुभुक्खिद (बुभुक्खिद) 2/1 वि वा (अ) = अथवा दुहिद (दुहिद) 2/1 वि दट्ठूण (दट्ठूण) संकृ जो (ज) 1/1 सवि दु (अ) = भी दुहिदमणो {[(दुहिद) वि - (मण) 1/1] वि} पडिवज्जदि (पडिवज्ज) व 3/1 सक त (त[1]) 2/1 स किवया (किवया) 3/1 अनि (क्रिविअ की तरह प्रयुक्त) = दयालुता से तस्सेसा [(तस्स) + (एसा)] तस्स (त) 6/1स एसा (एता) 1/1 सवि होदि (हो) व 3/1 अक अणुकंपा (अणुकंपा) 1/1।

1 कभी-कभी सप्तमी के स्थान पर द्वितीया का प्रयोग पाया जाता है। (हे प्रा व्या 3-137)

86 तिसिद = प्यासे। बुभुक्खिद = भूखे। वा (अ) = अथवा। दुहिद = दुःखी। दट्ठूण = देख कर। जो = जो। दु (अ) = भी। दुहिदमणो = दुःखी मनवाला। पडिवज्जदि = व्यवहार करता है। त = उसके प्रति। किवया = दयालुता से। तस्सेसा = उसके, यह। होदि = होती है। अणुकंपा = अनुकंपा।

87 कोधो (कोध) 1/1 व (अ) = या जदा (अ) = जिस समय माणो (माण) 1/1 माया (माया) 1/1 लोभो (लोभ) 1/1 व (अ) = या चित्तमासेज्ज [(चित्त) + (आसेज्ज)] चित्त[1] (चित्त) 2/1 आसेज्ज (आस) व 3/1 अक जीवस्स (जीव) 6/1 कुणदि (कुण) व 3/1 सक खोहु (खोह) 2/1 कलुसो (कलुस) 1/1 त्ति (अ) = शब्द स्वरूपद्योतक य (अ) = निस्सन्देह त (अ) = उस समय बुधा (बुध) 1/2 वि वेंति (वू) व 3/2 सक ।

1 सप्तमी के स्थान पर द्वितीया का प्रयोग किया गया है । (हे प्रा व्या 3–137) ।

87 कोधो = कोध । व = या । जदा = जिस समय । माणो = मान । माया = माया । लोभो = लोभ । व = या । चित्तमासेज्ज = चित्त में, घटित होता है । जीवस्स = जीव के । कुणदि = उत्पन्न करता है । खोहु = व्याकुलता (को) । कलुसो = मलिनता । य = निस्सन्देह । त = उस समय । बुधा = ज्ञानी । वेंति = कहते हैं ।

88 चरिया (चरिया) 1/1 पमादवहुला [(पमाद) –, (वहुल→ वहुला) 1/1] कालुस्स (कालुस्स) 1/1 लोलदा (लोल→ लोलदा) 1/1 य (अ) = और विसयेसु (विसय) 7/2 परपरितावपवादो [(पर) + (परिताव) + (अपवाद)] [(पर) वि – (परिताव) – (अपवाद) 1/1] पावस्स (पाव) 6/1 य(अ) = व आसव (आसव) 2/1 कुणदि (कुण) व 3/2 सक ।

88 चरिया = आचरण । पमादवहुला = लापरवाहीपूर्वक । कालुस्सं = मलिनता । लोलदा = लालसा । य = और । विसयेसु = विषयो मे । परपरितावपवादो = परपरिताव + अपवादो = दूसरो को पीडा देना, कलक लगाना । पावस्स = पाप के । य = व । आसव = आने को । कुणदि = प्रोत्साहित करता है ।

89 सण्णाओ (सण्णा) 1/2 य (अ) = और तिलेस्सा [(ति) – (लेस्सा) 1/1] इंदियवसदा = [(इदिय) – (वस→ वसदा) 1/1] य (अ) = और अत्तरुद्दाणि [(अत्त) – (रुद्द) 1/2] णाण (णाण) 1/1 च (अ) = और दुप्पउत्त (दुप्पउत्त) भूक्ृ 1/1 अनि मोहो (मोह) 1/1 पावप्पदा [(पाव) – (प्पद) 1/2] होंति (हो) व 3/2 अक ।

89 सण्णाओ = सज्ञाए । य = और । तिलेस्सा = तीन लेश्याए । इदियवसदा = इन्द्रियो की अधीनता । अत्तरुद्दाणि = आर्त्त और रौद्र ध्यान । णाणं =

ज्ञान । दुप्पउत्त = अनुचित रूप से प्रयोग किया गया । मोहो = मोह । पावप्पदा = पाप के स्थान । होंति = होते है ।

90 भाव (भाव) 1/1 तिविहपयार [(तिविह) वि – (पयार) 1/1] सुहासुह [(सुह) + (असुह)] [(सुह) वि – (असुह) वि] सुद्धमेव [(सुद्ध) + (एव)] सुद्ध (सुद्ध) 1/1 वि एव (अ) = ही णायव्व (णा) विधि कृ1/1 असुह (असुह) 1/1 वि च (अ) = और अट्टरुद्द [(अट्ट) – (रुद्द) 1/1] सुहधम्म [(सुह) वि – (धम्म) 1/1] जिणवरिंदेहिं (जिणवरिंद) 3/2 ।

90 भाव = भाव । तिविहपयार = तीन प्रकार के भेद । सुहासुह = शुभ, अशुभ । सुद्धमेव = शुद्ध ही । णायव्व = समझा जाना चाहिए । असुह = अशुभ । च = और । अट्टरुद्द = आर्त्त और रौद्र । सुहधम्म = शुभ, धर्म । जिणवरिंदेहिं = अरहंतो द्वारा ।

91 जो (ज) 1/1 सवि जाणादि[1] (जाण) व 3/1 सक जिणिंदे (जिणिंद) 2/2 पेच्छदि (पेच्छ) व 3/1 सक सिद्धे (सिद्ध) 2/2 तधेव (अ) = उसी प्रकार अणगारे (अणगार) 2/2 जीवे (जीव) 7/1 य (अ) = तथा साणुकंपो [(स) + (अणुकंपो)] [(स) – (अणुकंप) 1/1] उवओगो (उवओग) 1/1 सो (त) 1/1 सवि सुहो (सुह) 1/1 तस्स (त) 6/1 स ।

1 (हेम प्राकृत व्याकरण, 3–158)

91 जो = जो । जाणादि = समझता है । जिणिंदे = अरहंतो को । पेच्छदि = समझता है । तधेव = उसी प्रकार । अणगारे = साधुओ को । जीवे = जीव पर । य = तथा । साणुकंपो = दयासहित । उवओगो = उपयोग । सो = वह । सुहो = शुभ । तस्स = उसका ।

92 विसयकसाओगाढो [(विसय) + (कसाअ) + (ओगाढो)] [(विसय) – (कसाअ) – (ओगाढ) भूकृ 1/1 अनि] दुस्सुदिदुच्चित्तदुट्ठगोट्ठिजुदो [(दुस्सुदि) – (दुच्चित्त) – (दुट्ठ) वि – (गोट्ठि) – (जुद) भूकृ 1/1 अनि] उग्गो (उग्ग) 1/1 वि उम्मग्गपरो[1] [(उम्मग्ग) – (पर) 1/1 वि] उवओगो (उवओग) 1/1 जस्स (ज) 6/1 स सो (त) 1/1 सवि असुहो (असुह) 1/1 वि ।

1 समास के अन्त मे अर्थ होता है 'लीन' ।

92 विसयकसाओगाढो = विषय-कषायों में डूबा हुआ । दुस्सुदिदुच्चित्तदुट्ठ-गोट्ठिजुदो = दुष्ट सिद्धान्त, दुष्ट बुद्धि, दुष्ट चर्या से जुड़ा हुआ । उग्गो = क्रूर । उम्मग्गपरो = कुपथ में लीन । उवओगो = उपयोग । जस्स = जिस का । सो = वह । असुहो = अशुभ ।

93 सुद्ध (सुद्ध) 1/1 वि सुद्धसहाव [(सुद्ध) वि – (सहाव) 1/1] अप्पा[1] (अप्प) 2/1 अपभ्रंश अप्पम्मि[2] (अप्प) 7/1 त (त) 1/1 सवि च (अ) = ही णायव्व (णा) विधि कृ 1/1 इदि (अ) = इस प्रकार जिणवरेंहि (जिणवर) 3/2 भणिय (भण) भूकृ 1/1 ज (ज) 1/1 सवि सेयं (सेय) 1/1 वि तं (त) 2/1 सवि समायरह (समायर) विधि 2/2 सक ।

1 कभी कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या, 3–137) ।

2 कभी कभी तृतीया विभक्ति के स्थान पर सप्तमी विभक्ति का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या, 3–135) ।

93 सुद्ध = शुद्ध । सुद्धसहाव = शुद्ध स्वभाव । अप्पा = आत्मा को→ आत्मा में । अप्पम्मि = आत्मा में→ आत्मा के द्वारा । तं = वह । च = ही । णायव्वं = अनुभव किया जाना चाहिए । इदि = इस प्रकार । जिणवरेंहि = अरहंतों द्वारा । भणियं = कहा गया । जं = जो । सेय = श्रेष्ठ । त = उसको । समायरह = आचरण करो ।

94 उवओगो (उवओग) 1/1 जदि (अ) = यदि हि = पादपूरक सुहो = शुभ पुण्णं (पुण्ण) 2/1 वि जीवस्स (जीव) 6/1 संचय (सचय) 2/1 जादि (जा) व 3/1 सक असुहो (असुह) 1/1 वि वा (अ) = और तध (अ) = उसी प्रकार पाव (पाव) 2/1 तेसिमभावे [(तेसिं) + (अभावे)] तेसिं (त) 6/2 स अभावे (अभाव) 7/1 ण (अ) = नहीं चयमत्थि [(चय) + (अत्थि)] चय[1] (चय) 2/1 अत्थि (अ) = है ।

1 यहा द्वितीया का प्रयोग प्रथमा अर्थ में किया गया है ।
(हे प्रा व्या 3-137) ।

94 उवओगो = उपयोग । जदि = यदि । सुहो = शुभ । पुण्णं = पुण्य को । जीवस्स = जीव का । सचयं = संग्रह (को) । जादि = करता है । असुहो = अशुभ । वा = और । तध = उसी प्रकार । पाव = पाप को । तेसिमभावे = उनके, अभाव में । ण = नहीं । चयमत्थि = संग्रह नहीं होता है ।

95 अह (अ) = यदि पुण (अ) = किन्तु अप्पा (अप्प) 2/1 अपभ्रंश णिच्छदि [(ण) + (इच्छदि)] ण (अ) = नहीं इच्छदि (इच्छ) व 3/1 सक पुण्णाइ (पुण्ण) 2/2 करेदि (कर) व 3/1 सक णिरवसेसाइं (णिरवसेस) 2/2 वि तह वि (अ) = तो भी ण (अ) = नहीं पावदि (पाव) व 3/1 सक सिद्धि (सिद्धि) 2/1 ससारत्थो (ससारत्थ) 1/1 वि पुणो (अ) = ही भणिदो (भण) भूकृ 1/1 ।

95 अह = यदि । पुण = किन्तु । अप्पा = आत्मा को । णिच्छदि = ण + इच्छदि = नहीं, चाहता है । पुण्णाइ = पुण्यों को । करेदि = करता है । णिरवसेसाइ = सकल (को) । तह वि = तो भी । ण = नहीं । पावदि = पाता है । सिद्धि = परम शान्ति । ससारत्थो = ससार मे स्थित । पुणो = ही । भणिदो = कहा गया ।

96 वदणियमाणि [(वद) - (णियम) 2/2] धरता (धर) वकृ 1/2 सीलाणि (सील) 2/2 तहा (अ) = तथा तव (तव) 2/1 च (अ) = और कुव्वता (कुव्व) वकृ 1/2 परमट्ठबाहिरा [(परमट्ठ) - (बाहिर) 1/2 वि] जे (ज) 1/2 सवि णिव्वाण (णिव्वाण) 2/1 ते (त) 1/2 सवि ण (अ) = नहीं विंदति (विंद) व 3/2 सक ।

96 वदणियमाणि = व्रत और नियमों को । धरता = धारण करते हुए । सीलाणि = शीलों को । तहा = तथा । तव = तप को । च = और । कुव्वता = पालन करते हुए । परमट्ठबाहिरा = परमार्थ से अपरिचित । जे = जो । णिव्वाण = परम शान्ति को । ते = वे । ण = नहीं । विंदति = प्राप्त करते हैं ।

97 सुहपरिणामो [(सुह) वि - (परिणाम) 1/1] पुण्ण (पुण्ण) 1/1 असुहो (असुह) 1/1 वि पावत्ति [(पाव) + (इति)] पाव (पाव) मूलशब्द इति = इस प्रकार भणियमण्णेसु [(भणिय) + (अण्णेसु)] भणिय (भण) भूकृ 1/1 अण्णेसु (अण्ण) 7/2 परिणामो (परिणाम) 1/1 णण्णगदो [(ण) + (अण्ण) + (गदो)] ण = नहीं [(अण्ण) वि - (गद) भूकृ 1/1 अनि] दुक्खक्खयकारणं [(दुक्ख) - (क्खय) - (कारण) 1/1] समये (समय) 7/1 ।

97 सुहपरिणामो = शुभ, भाव । पुण्ण = पुण्य । असुहो = अशुभ । पावत्ति = पाप, इस प्रकार । भणियमण्णेसु = कहा गया, पर के प्रति । परिणामो =

भाव । णण्णगदो = पर मे न झुका हुआ । दुक्खक्खयकारण = दुख के नाश का कारण । समये = आगम मे ।

98 आदसहावा [(आद) – (सहाव) 5/1] अण्णं (अण्ण) 1/1 सवि सच्चित्ताचित्तमिस्सिय [(सच्चित्त) + (अचित्त) – (मिस्सिय) 1/1 वि] हवइ (हव) व 3/1 अक त (त) 1|1 सवि परदव्वं [(पर) वि – (दव्व) 1/1] भणिय (भण) भूकृ 1/1 अवितत्थ (क्रिविअ) = सच्चाई-पूर्वक सव्वदरसीहिं (सव्वदरसि) 3/2 वि।

98 आदसहावा = आत्म-स्वभाव से । अण्ण = अन्य । सच्चित्ताचित्तमिस्सियं = सचित्त – अचित्त - मिश्रित । हवइ = होता है । त = वह । परदव्वं = पर द्रव्य । भणिय = कहा गया । अवितत्थं = सच्चाई-पूर्वक । सव्वदरसीहिं = सर्वज्ञो द्वारा ।

99 जस्स (ज) 6/1 स हिदयेणुमत्त[1] [(हिदये) + (अणुमत्त)] हिदये (हिदय) 7/1 अणुमत्त[1] (अणुमत्त) 1/1 परदव्वम्हि (परदव्व) 7/1 विज्जदे (विज्ज) व 3/1 अक रागो (राग) 1/1 सो (त) 1/1 सवि ण (अ) = नही विजाणदि (विजाण) व 3/1 सक समय (समय) 2/1 सगस्स (सग) 6/1 सव्वागमधरोवि [(सव्व) + (आगम) + (धरो) + (वि)] [(सव्व) वि – (आगम) – (धर) 1/1 वि] वि (अ) = भी ।

1 अणुमत्त = णुमत्त । यहा स्वर का लोप है (अभिनव प्राकृत व्याकरण, पृष्ठ 123) ।

99 जस्स = जिसके । हिदयेणुमत्त = हृदय मे अणु के बराबर । परदव्वम्हि = पर द्रव्य मे । विज्जदे = विद्यमान है । रागो = राग । सो = वह । ण = नही । विजाणदि = समझता है । समयं = आचरण को । सगस्स = आत्मा के । सव्वागमधरोवि = समस्त आगमो का धारण करनेवाला ।

100 जो (ज) 1/1 सवि सव्वसगमुक्को [(सव्व) वि –(सग) – (मुक्क) भूकृ 1/1 अनि] णण्णमणो = अणण्णमणो[1] (अणण्णमण) 1/1 वि अप्पण (अप्पण) 2/1 सहावेण (सहाव) 3/1 जाणदि (जाण) व 3/1 सक पस्सदि (पस्स) व 3/1 सक णियद (क्रिविअ) = निश्चयात्मक रूप से सो (त) 1/1 सवि सगचरिय [(सग) – (चरिय) 2/1] चरदि (चर) व 3/1 सक जीवो (जीव) 1/1 ।

1 यहा स्वर का लोप है (अभिनव प्राकृत व्याकरण, पृष्ठ, 123) ।

100 जो = जो । सव्वसगमुक्को = सम्पूर्ण आसक्ति से रहित । (अ)णण्णमणो = तल्लीन । अप्पण = आत्मा को । सहावेण = स्वभाव से । जाणदि = जानता (है) । पस्सदि = देखता है । णियद = निश्चयात्मक रूप से । सो = वह । सगचरियं = आत्मा में, आचरण (को) । चरदि = करता है । जीवो = व्यक्ति ।

101 एव (अ) = इस प्रकार विदिदत्थो [(विदिद) + (अत्थो)] [(विदिद) भूकृ अनि - (अत्थ) 1/1] जो (ज) 1/1 सवि दव्वेसु (दव्व) 7/2 ण (अ) = नही रागमेदि [(राग) + (एदि)] राग (राग) 2/1 एदि (ए) व 3/1 सक दोस (दोस) 2/1 वा (अ) = और उवओगविसुद्धो [(उवओग) - (विसुद्ध) 1/1 वि] सो (त) 1/1 सवि खवेदि (खव) व 3/1 सक देहुब्भव [(देह) + (उब्भव)] [(देह) - (उब्भव) 2/1 वि] दुक्खं (दुक्ख) 2/1 ।

101 एव = इस प्रकार । विदिदत्थो = विदिद + अत्थ = जानी गई, वस्तुस्थिति । जो = जो । दव्वेसु = वस्तुओ के प्रति । ण = नही । रागमेदि = राग + एदि = राग को, करता है । दोस = द्वेष को । वा = और । उवओगविसुद्धो = उपयोग से शुद्ध । सो = वह । खवेदि = समाप्त कर देता है । देहुब्भव = देह से उत्पन्न । दुक्ख = दुःख को ।

102 अइसयमादसमुत्थं [(अइसय) + (आद) + (समुत्थ)] अइसय (अइसय) 1/1 वि [(आद) - (समुत्थ) 1/1 वि] विसयातीद [(विसय) + (अतीद)] [(विसय) - (अतीद) 1/1 वि] अणोवममणत [(अणोवम) + (अणत)] अणोवम (अणोवम) 1/1 वि अणत (अणत) 1/1 वि अव्वुच्छिण्ण (अव्वुच्छिण्ण) 1/1 वि च (अ) = तथा सुह (सुह) 1/1 सुद्धुवओगप्पसिद्धाण [(सुद्ध) + (उवओग) + (प्पसिद्धाण)] [(सुद्ध) भूकृ अनि-(उवओग) -(प्पसिद्ध) भूकृ 6/2 अनि] ।

102 अइसयमादसमुत्थ = अइसय + आद + समुत्थ = श्रेष्ठ, आत्मोत्पन्न, (आत्मा से, उत्पन्न) । विसयातीद = विषयातीत । अणोवममणत = अणोवम + अणत = अनुपम, अनन्त । अव्वुच्छिण्णं = अविच्छिन्न । च = तथा । सुह = सुख । सुद्धुवओगप्पसिद्धाण = सुद्ध + उवओग + प्पसिद्धाण = शुद्ध, उपयोग से, विभूषित का ।

103 धम्मेण[1] (धम्म) 3/1 परिणदप्पा [(परिणद) + (अप्पा)] [(परिणद) भूकृ अनि - (अप्प) 1/1] अप्पा (अप्प) 1/1 जदि (अ) = यदि सुद्धसपयोगजुदो [(सुद्ध) वि - (सपयोग) - (जुद) भूकृ 1/1 अनि] पावदि (पाव) व 3/1 सक णिव्वाणसुहं [(णिव्वाण) - (सुह) 2/1] सुहोवजुत्तो [(सुह) + (उवजुत्तो)] [(सुह) - (उवजुत्त) भूकृ 1/1 अनि] व (अ) = तथा सग्गसुह [(सग्ग) - (सुह) 2/1] ।

1 कभी कभी सप्तमी के स्थान पर तृतीया का प्रयोग पाया जाता है। (हे प्रा व्या 3-137) ।

103 धम्मेण = धर्म के रूप मे । परिणदप्पा = परिणत + अप्पा = रूपान्तरित, व्यक्ति । अप्पा = व्यक्ति । जदि = यदि । सुद्धसपयोगजुदो = शुद्ध, क्रियाओ से, युक्त । पावदि = प्राप्त करता है । णिव्वाणसुह = परम शान्तिरूपी सुख को । सुहोवजुत्तो = सुह + उवजुत्तो = शुभ क्रियाओ से, युक्त । व = तथा । सग्गसुह = स्वर्ग, सुख को ।

104 चारित्त (चारित्त) 1/1 खलु (अ) = निस्सदेह धम्मो (धम्म) 1/1 धम्मो (धम्म) 1/1 जो (ज) 1/1 सवि सो (त) 1/1 सवि समोत्ति [(समो) + (इति)] समो (सम) 1/1 इति (अ) = निश्चय ही णिद्दिट्ठो (णिद्दिट्ठ) भूकृ 1/1 अनि मोहक्खोहविहीणो [(मोह) - (क्खोह) - (विहीण) 1/1 वि] परिणामो (परिणाम) 1/1 अप्पणो (अप्पण) 6/1 हु (अ) = ही समो (सम) 1/1 ।

104 चारित्त = चारित्र । खलु = निस्सदेह । धम्मो = धर्म । धम्मो = धर्म । जो = जो । सो = वह । समोत्ति = समो + इति = समता, निश्चय ही । णिद्दिट्ठो = कहा गया । मोहक्खोहविहीणो = मोह, क्षोभ से रहित । परिणामो = भाव । अप्पणो = आत्मा का । हु = ही । समो = समता ।

105 तह (अ) = तथा सो (त) 1/1 सवि लद्धसहावो [(लद्ध) भूकृ अनि - (सहाव) 1/1] सव्वण्हू (सव्वण्हु) 1/1 वि सव्वलोगपदिमहिदो [(सव्व) - (लोगपदि) - (मह→महिद) भूकृ 1/1] भूदो (भूद) भूकृ 1/1 सयमेवादा [(सय) + (एव) + (आदा)] सय = स्वय एव (अ) = ही आदा (आद) 1/1 हवदि (हव) व 3/1 अक सयभुत्ति [(सयभू) + (इति)] सयभु (सयभू) 1/1 इति (अ) = इस प्रकार णिद्दिट्ठो (णिद्दिट्ठ) भूकृ 1/1 अनि ।

105 तहं = तथा। सो = वह। लद्धसहावो = स्वय ही स्वभाव अनुभव कर लिया गया। सव्वण्हू = सर्वज्ञ। सव्वलोगपदिमहिदो = लोकाधिपति इन्द्र द्वारा पूजा गया। भूदो = हुआ। सयमेवादा = सय + एव + आदा = स्वय, ही, व्यक्ति। हवदि = होता है। सयभुत्ति = स्वयभू, इस प्रकार। णिद्दिट्ठो = कहा गया।

106 उवओगविसुद्धो [(उवओग) – (विसुद्ध) 1/1 वि] जो (ज) 1/1 सवि विगदावरणतरायमोहरओ [(विगद) + (आवरण) + (अतराय) + (मोह) + (रओ)] [(विगद) भूकृ अनि – (आवरण) – (अतराय) – (मोह) – (रअ) *1/1*] भूदो (भूद) भूकृ *1/1* अनि सयमेवादा [(सय) + (एव) + (आदा)] सय (अ) = स्वय एव (अ) = ही आदा (आद) 1/1 जादि (जा) व 3/1 सक पर (अ) = पूर्णरूप से णेयभूदाणं [(णेय) – (भूद)[1] 6/2]।

1 कभी कभी द्वितीया के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3-134)।

106 उवओगविसुद्धो = उपयोग मे, शुद्ध। जो = जो। विगदावरणतराय-मोहरओ = विगद + आवरण + अतराय + मोह + रओ = नष्ट कर दी गई, आवरण, बाधा, मोहरूपी धूल। भूदो = हुआ। सयमेवादा = सय + एव + आदा = स्वय, ही, व्यक्ति। जादि = जान लेता है। पर = पूर्णरूप से। णेयभूदाण = ज्ञेय पदाथो का → ज्ञेय पदार्थों को।

107 सुविदिदपदत्थसुत्तो [(सु) अ = भली प्रकार से – (विदिद) भूकृ अनि – (पयत्थ) – (सुत्त) 1/1] सजमतवसजुदो [(सजम) – (तव) – (सजुद) 1/1 वि] विगदरागो [(विगद) – (राग) 1/1] समणो (समण) 1/1 समसुहदुक्खो [(सम) वि – (सुह) – (दुक्ख) 1/1] भणिदो (भण) भूकृ 1/1 सुद्धोवओगोत्ति [(सुद्ध) + (उवओगो) + (इति)] [(सुद्ध) वि – (उवओग) 1/1] इति (अ) = समाप्तिसूचक।

107 सुविदिदपदत्थसुत्तो = भली प्रकार से जान लिए गए, तत्त्व, सूत्र। सजमतवसजुदो = सयम और तप से सयुक्त। विगदरागो = राग समाप्त कर दिया गया। समणो = श्रमण। समसुहदुक्खो = सुख और दु ख समान। भणिदो = कहा गया। सुद्धोवओगोत्ति = शुद्धोपयोगवाला।

108 ठाणणिसेज्जविहारा [(ठाण) – (णिसेज्ज)[1] – (विहार) 1/2] धम्मुवदेसो [(धम्म) + (उवदेसो)] [(धम्म) – (उवदेस) 1/1] य (अ) = तथा णियदयो (णियद) पंचमी-अर्थक ओ→यो प्रत्यय तेसिं (त) 6/2 स अरहंताण (अरहंत) 6/2 काले (काल) 7/1 मायाचारोव्व [(माया) + (चारो) + (व्व)] [(माया) – (चार) 1/1] व्व (अ) = की तरह इत्थीणं[2] (इत्थि) 6/2 ।

1 यहा 'णिसेज्जा' का 'णिसेज्ज' हुआ है । समास मे दीर्घ का ह्रस्व किया जा सकता है (हे प्रा व्या 1-67) ।

2 कभी कभी षष्ठी का प्रयोग सप्तमी के स्थान पर पाया जाता है (हे प्रा व्या 3-134) ।

108 ठाणणिसेज्जविहारा = खड़े रहना, बैठना, गमन करना । धम्मुवदेसो = धर्म का उपदेश देना । य = तथा । णियदयो = निश्चित रूप से । तेसिं = उन के । अरहंताण = अरहंतो के । काले = समय मे । मायाचारोव्व = माताओ का आचरण, जैसे कि । इत्थीणं = स्त्रियो का→स्त्रियो मे ।

109 सव्वेसिं (सव्व) 6/2 सवि खंधाण (खंध) 6/2 जो (ज) 1/1 सवि अंतो (अंत) 1/1 वि त (त) 2/1 सवि वियाण (वियाण) विधि 2/1 सक परमाणू (परमाणु) 1/1 सो (त) 1/1 सवि सस्सदो (सस्सद) 1/1 वि असद्दो (असद्द) 1/1 वि एक्को (एक्क) 1/1 वि अविभागि (अविभागि) 1/1 वि मुत्तिभवो [(मुत्ति) – (भव) 1/1] ।

109 सव्वेसिं = समस्त । खंधाण = पुद्गल पिण्डो का । जो = जो । अंतो = अन्तिम अंश । त = उसको । वियाण = समझो । परमाणू = परमाणु । सो = वह । सस्सदो = शाश्वत । असद्दो = शब्दरहित । एक्को = एक । अविभागी = अविभाज्य । मुत्तिभवो = भौतिक वस्तुओ का मूल ।

110. आदेसमत्तमुत्तो [(आदेश)–(मत्त)–(मुत्त) 1/1 वि] धादुचदुक्कस्स [(धादु)–(चदुक्क) 6/1] कारण (कारण) 1/1 जो (ज) 1/1 सवि दु (अ) = पादपूरक सो (त) 1/1 सवि णेओ (णेअ) विधिकृ 1/1 अनि परमाणू (परमाणु) 1/1 परिणामगुणो [(परिणाम)–(गुण) 1/1] सयमसद्दो [(सय) + (असद्दो)] सय (अ) = स्वय असद्दो (असद्द) 1/1 वि ।

110 आवेसामत्तमुत्तो = विवरण से, ही, मूर्त । धादुचदुक्कस्स = मूल तत्त्व, चार का । कारण = कारण । जो = जो । सो = वह । णेओ = समझा जाना चाहिए । परमाणू = परमाणु । परिणामगुणो = परिणमन, गुणवाला । सयमसद्दो = सय + असद्दो = स्वय, शब्दरहित ।

111 सद्दो (सद्द) 1/1 खंधप्पभवो [(खध)-(प्पभव) 1/1 वि] खंधो (खध) 1/1 परमाणुसगसघादो [(परमाणु)-(सग)-(सघ) 5/1] पुट्ठेसु[1] (पुट्ठ) भूकृ 7/2 तेसु (त) 7/2 स जायदि (जा) व 3/1 अक सद्दो (सद्द) 1/1 उप्पादगो (उप्पादग) 1/1 वि णियदो (णियद) भूकृ 1/1 अनि ।

1 कभी-कभी तृतीया के स्थान पर सप्तमी का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3-137) ।

111 सद्दो = शब्द । खधप्पभवो = स्कन्धो से उत्पन्न । खधो = स्कन्ध । परमाणुसगसघादो = परमाणुओ के सगम - समूह से । पुट्ठेसु = स्पर्श मे→ स्पर्श से । तेसु = उनमे । जायदि = उत्पन्न होता है । सद्दो = शब्द । उप्पादगो = उत्पन्न करनेवाला । णियदो = अवश्य ।

112 एयरसवण्णगध [(एय)-(रस)-(वण्ण)-(गध) 1/1] दो (दो) 1/1 वि फासं (फास) 1/1 सद्दकारणमसद्द [(सद्द) + (कारण) + (असद्द)] [(सद्द)-(कारण) 1/1] असद्द (असद्द) 1/1 वि खघतरिदं [(खघ) + (अतर) + (इद)] [(खघ)-(अतर)-(इम) 1/1 सवि] दव्व (दव्व) 1/1 परमाणु (परमाणु) 1/1 त (त) 2/1 सवि वियाणेहि (वियाण) विधि 2/1 सक ।

112 एयरसवण्णगध = एकरस, वर्ण, गध । दो = दो । फास = स्पर्श । सद्दकारणमसद्द = सद्द + कारण + असद्द = शब्द का कारण, शब्दरहित । खघतरिद = खघ + अतर + इद = स्कन्ध से सबध, यह । दव्वं = द्रव्य । परमाणु = परमाणु । त = उसको । वियाणेहि = समझो ।

113 उवभोज्जमिंदिएहिं [(उवभोज्ज) + (इदिएहिं)] उवभोज्ज (उवभोज्ज) 1/1 वि इदिएहिं (इदिअ) 3/2 य (अ) = तथा इदिय (इदिय) मूल शब्द 1/2 काया (काया) 1/1 मणो (मण) 1/1 य (अ) = व कम्माणि (कम्म) 1/2 ज (ज) 1/1 सवि हवदि (हव) व 3/1 अक मुत्तमण्ण [(मुत्त) + (अण्ण)] मुत्त (मुत्त) 1/1 वि अण्ण (अण्ण) 1/1 वि त

(त) 1/1 सवि सव्वं (सव्व) 1/1 वि पुग्गलं (पुग्गल) 1/1 जाणं (जाण) विधि 2/1 सक।

113 उवभोज्जमिंदिएहिं = इन्द्रियो द्वारा भोगे जाने योग्य विषय। य = तथा। इदिय = इन्द्रिया। काया = शरीर। मणो = मन। य = व। कम्माणि = कर्म। ज = जो। हवदि = है। मुत्तमण्ण = अन्य भौतिक। त = वह। सव्व = सभी। पुग्गल = पुद्गल। जाणे = समझो।

114 देहो (देह) 1/1 य (अ) = और मणो (मण) 1/1 वाणी (वाणी) 1/1 पोग्गलदव्वप्पगत्ति [(पोग्गल) + (दव्व) + (अप्पग)[1] + (इति)] [(पोग्गल)-(दव्व)-(अप्पग) मूल शब्द 1/2] इति (अ) = पादपूरक णिद्दिट्ठा (णिद्दिट्ठ) भूकृ 1/2 अनि पोग्गलदव्वपि [(पोग्गल) + (दव्व) + (अपि)] [(पोग्गल)-(दव्व) 1/1] अपि = भी पुणो = और पिंडो (पिंड) 1/1 परमाणुदव्वाण [(परमाणु)-(दव्व) 6/2]।

1 'अप्पग' समास के अन्त मे अर्थ होता है 'बना हुआ'।

114 देहो = देह। य = और। मणो = मन। वाणी = वाणी। पोग्गलदव्वप्पगत्ति = पुद्गल द्रव्य से बने हुए। णिद्दिट्ठा = कहे गये। पोग्गलदव्वपि = पुद्गल द्रव्य भी। पुणो = और। पिंडो = पिण्ड। परमाणुदव्वाणं = परमाणु द्रव्यो का।

115 अपदेसो (अपदेस) 1/1 परमाणू (परमाणु) 1/1 पदेसमेत्तो (पदेसमेत्त) 1/1 वि य (अ) = तथा सयमसद्दो [(सय) + (असद्दो)] सय (अ) = स्वय असद्दो (असद्द) 1/1 वि जो (ज) 1/1 सवि णिद्धो (णिद्ध) भूकृ 1/1 अनि वा (अ) = अथवा लुक्खो (लुक्ख) 1/1 वि वा (अ) = और दुपदेसादित्तमणुहवदि [(दु) + (पदेस) + (आदित्त) + (अणुहवदि)] [(दु) - (पदेस) - (आदित्त) 2/1] अणुहवदि (अणुहव) व 3/1 सक।

115 अपदेसो = प्रदेशरहित। परमाणू = परमाणु। पदेसमेत्तो = एक प्रदेश जितना। य = तथा। सयमसद्दो = सय + असद्दो = स्वय, शब्दरहित। जो = जो। णिद्धो = स्निग्ध। वा = अथवा। लुक्खो = रूखा। वा = और। दुपदेसादित्तमणुहवदि = दो प्रदेश आदिपने को ग्रहण करता है।

116 एगुत्तरमेगादी [(एगुत्तर) + (एग) + (आदी)] एगुत्तर (अ) = एक के बाद मे [(एग) - (आदि)[1] 1/1] अणुस्स (अणु) 6/1 णिद्धत्तणं

(णिद्धत्तण) 2/1 व (अ) = और लुक्खत्तं (लुक्खत्त) 2/1 परिणामादो (परिणाम) 5/1 भणिद (भण) भूकृ 1/1 जाव (अ) = तक अणंतत्तमणुहवदि [(अणतत्त) + (अणुहवदि)] अणतत्त (अणतत्त) 1/1 अणुहवदि (अणुहव) व 3/1 सक।

1 समास के अन्त मे 'आदि' का अर्थ होता है 'आरम्भ करके'।

116 एगुत्तरमेगादी = एक के बाद मे, एक से आरम्भ करके। अणुस्स = परमाणु के। णिद्धत्तण = स्निग्धता। व = और। लुक्खत्त = रूक्षता। परिणामादो = परिणमन के कारण। भणिद = कही गई। जाव = तक। अणंतत्तमणुहवदि = अणंतत्त + अणुहवदि = अनन्तता, ग्रहण करता है।

117. णिद्धा (णिद्ध) भूकृ 1/2 अनि वा (अ) = अथवा लुक्खा (लुक्ख) 1/2 वि अणुपरिणामा [(अणु) - (परिणाम) 1/2] समा (सम) 1/2 वि व (अ) = पादपूरक विसमा (विसम) 1/2 वि समदो (सम) पचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय दुराधिगा [(दु) + (र) अ + (अधिगा)] [(दु) - (र) अ = ही - (अधिग) 1/2 वि] जदि (अ) = यदि बज्झन्ति (वज्झन्ति) व कर्म 3/2 सक हि (अ) = निश्चय ही आदिपरिहीणा [(आदि)[1] - (परिहीण) भूकृ 1/2 अनि]।

1 आदि = प्रथम अश

117 णिद्धा = स्निग्ध। वा = अथवा। लुक्खा = रूक्ष। अणुपरिणामा = परमाणुओ का परिणमन। समा = सम। विसमा = विषम। समदो = प्रत्येक सख्या से (इसी प्रकार)। दुराधिगा = दो ही अधिक। जदि (अ) = यदि। वज्झति = बाघे जाते हैं। हि = निश्चय ही। आदिपरिहीणा = प्रथम अशरहित।

118 णिद्धत्तणेण[1] (णिद्धत्तण) 3/1 दुगुणो [(दु) वि - (गुण) 1/1] चदुगुणणिद्धेण [(चदु) वि - (गुण) - (णिद्ध) 3/1] बधमणुहवदि [(वध) + (अणुहवदि)] वध (वध) 2/1 अणुहवदि (अणुहव) व 3/1 सक लुक्खेण[1] (लुक्ख) 3/1 वा (अ) = और तिगुणिदो [(ति) - (गुणि) पचमी अर्थक दो प्रत्यय] अणु (अणु) मूल शब्द 1/1 बज्झदि (वज्झदि) व कर्म 3/1 सक अनि पचगुणजुत्तो [(पच) वि - (गुण) - (जुत्त) भूकृ 1/1 अनि]।

1 कभी कभी सप्तमी के स्थान पर तृतीया का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3-137)।

118 णिद्धतणेण = स्निग्धता से → स्निग्धता मे । दुगुणो = दो अंश । चदुगुणणिद्धेण = चार अंश स्निग्ध के साथ । बंधमणुहवदि = बंध अनुभव करता है । लुक्खेण = रूक्षता से→ रूक्षता मे । वा = और । तिगुणिदो = तीन अंशयुक्त से । अणु = परमाणु । बज्झदि = बांधा जाता है । पंचगुणजुत्तो = पांच अंशयुक्त ।

119 दुपदेसादि [(दु) वि + (पदेस) + (आदि)] [(दु) वि – (पदेस) – (आदि) मूल शब्द 1/1] खधा (खध) 1/2 सुहुमा (सुहुम) 1/1 वि वा (अ) = तथा बादरा (बादर) 1/2 वि ससठाणा [(स) वि – (सठाण) 1/2] पुढविजलतेउवाऊ [(पुढवि) – (जल) – (तेउ) – (वाउ) 1/1] सगपरिणामेहिं [(सग) वि – (परिणाम) 3/2] जायते (जा) व 3/2 सक ।

119 दुपदेसादि = दो प्रदेश से आरम्भ करके । खधा = स्कन्ध । सुहुमा = सूक्ष्म । वा = तथा । बादरा = स्थूल । ससंठाणा = आकारसहित । पुढविजलतेउवाऊ = पृथिवी, जल, अग्नि, वायु । सगपरिणामेहिं = स्वकीय परिणमन के द्वारा । जायते = उत्पन्न होते हैं ।

120 अइथूलथूल [(अइ) – (थूल) – (थूल) मूल शब्द 1/1 वि] थूल (थूल) 1/1 वि थूलसुहुम [(थूल) वि – (सुहुम) 1/1 वि] सुहुमथूलं [(सुहुम) – (थूल) 1/1 वि] च (अ) = और सुहुम (सुहुम) 1/1 वि अइसुहुम [(अइ) वि – (सुहुम) 1/1 वि] इदि (अ) = इस प्रकार धरादिय [(धरा) + (आदिय)] [(धरा) – (आदिय) 1/1] होदि (हो) व 3/1 अक छब्भेय [(छ) वि – (ब्भेय) 1/1] ।

120 अइथूलथूल = अति स्थूल स्थूल । थूल = स्थूल । थूलसुहुम = स्थूल-सूक्ष्म । सुहुमथूल = सूक्ष्म-स्थूल । च = और । सुहुम = सूक्ष्म । अइसुहुम = अति सूक्ष्म । इदि = इस प्रकार । धरादिय = पृथिवी से आरम्भ करके । होदि = होता है । छब्भेय = छह भेद ।

121 भूपव्वदमादीया [(भू) + (पव्वद) + (आदीया)] [(भू) – (पव्वद) 1/1] आदीया (आदीय) 1/2 भणिदा (भण) भूकृ 1/2 अइथूलथूलमिदि [(अइ) + (थूल) + (थूल) + (इदि)] [(अइ) वि – (थूल) – (थूल) 1/1] इदि = शब्दस्वरूपद्योतक खधा (खध) 1/2 थूला (थूल) 1/2 वि इदि = शब्दस्वरूपद्योतक विण्णेया (विण्णेय) विधिकृ 1/2 अनि

सप्पीजलतेलमादीया [(सप्पी) + (जल) + (तेल) + (आदीया)] [(सप्पी) – (जल) – (तेल) 1/1] आदीया (आदीय) 1/2 ।

121. भूपव्वदमादीया = भू, पर्वत आदि । भणिदा = कहे गये । अइथूलथूलमिदि = अति स्थूल स्थूल । खधा = स्कन्ध । थूला = स्थूल । विण्णेया = समझे जाने चाहिए । सप्पीजलतेलमादीया = घी, जल, तेल आदि ।

122 छायातवमादीया [(छाया) + (आतव) + (आदीया)] [(छाया) – (आतव) 1/1] आदीया (आदीय) 1/2 थूलेदरखधमिदि [(थूल) + (इदर) + (खध) + (इदि)] [(थूल) – (इदर) – (खध) 1/1] इदि (अ) = शब्दस्वरूपद्योतक वियाणाहि (वियाण) विधि 2/1 सक सुहुम (सुहुम) मूलशब्द 1/2 वि थूलेदि [(थूल) + (इदि)] थूल (थूल) मूल शब्द 1/2 वि इदि (अ) = शब्दस्वरूप द्योतक भणिया (भण) भूक 1/2 खधा (खध) 1/2 चउरक्खविसया [(चउरक्ख) – (विसय) 1/2] य (अ) = और ।

122 छायातवमादीया = छाया, धूप आदि । थूलेदरखधमिदि = स्थूल-सूक्ष्म स्कन्ध । वियाणाहि = जानो । सुहुम = सूक्ष्म । थूलेदि = स्थूल । भणिया = कहे गये । खधा = स्कन्ध । चउरक्खविसया = चार इन्द्रियो के विषय । य = और ।

123 सुहुमा (सुहुम) 1/2 वि हवति (हव) व 3/2 अक खधा (खध) 1/2 पावोग्गा = पाओग्गा = पाउग्गा (पउग्ग) 1/2 वि कम्मवग्गणस्स [(कम्म) – (वग्गण) 6/1] पुणो = और तव्विवरीया [(त) – (व्विवरीय) 1/2 वि] खधा (खध) 1/2 अइसुहुमा [(अइ) वि – (सुहुम) 1/2 वि] इदि (अ) = इस प्रकार परूवेंदि (परूव) व 3/2 सक ।

123 सुहुमा = सूक्ष्म । हवति = होते है । खधा = स्कन्ध । पावोग्गा = पाओग्गा = योग्य । कम्मवग्गणस्स = कर्म वर्गणा के । पुणो = और । तव्विवरीया = इसके विपरीत । खधा = स्कन्ध । अइसुहुमा = अति सूक्ष्म । इदि = इस प्रकार । परुवेंदि = प्रतिपादन करते हैं ।

124 अत्तादि [(अत्त) + (आदि)] [(अत्त) – (आदि) मूलशब्द 1/1] अत्तमज्झ [(अत्त) – (मज्झ) 1/1] अत्तत [(अत्त) + (अत)]

[(अत्त) – (अत) 1/1 वि] णेव (अ) = नही इंदिए[1] (इंदिअ) 7/1 गेज्झ (गेज्झ) विधि कृ 1/1 अनि अविभागी (अविभागि) 1/1 वि ज (ज) 1/1 सवि दव्व (दव्व) 1/1 परमाणू (परमाणु) 1/1 त (त) 1/1 सवि वियाणाहि (वियाण) विधि 2/1 सक ।

1 कभी कभी तृतीया के स्थान पर सप्तमी का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3-135) ।

124 अत्तादि = स्व, आदि । अत्तमज्झ = स्व, मध्य । अत्तत = स्व, अन्त । णेव = नही । इंदिए = इन्द्रिय मे→इन्द्रिय द्वारा । गेज्झ = ग्रहण योग्य । अविभागी = भेदरहित । ज = जो । दव्व = द्रव्य । परमाणू = परमाणु । त = वह । वियाणाहि = जानो ।

125 एयरसरूवगध [(एय) वि – (रस) – (रूव) – (गध) 1/1] दो (दो) 1/1 वि फास (फास) 1/1 त (त) 1/1 सवि हवे (हव) व 3/1 अक सहावगुण (सहावगुण) 1/1 वि विहावगुणमिदि [(विहावगुण) + (इदि)] विहावगुण (विहावगुण) 1/1 वि इदि (अ) = शब्दस्वरूप द्योतक भणिद (भण) भूकृ 1/1 जिणसमये [(जिण) – (समय) 7/1] सव्वपयडत्तं [(सव्व) वि – (पयडत्त) 1/1] ।

125 एयरसरूवगध = एक रस, रूप, गध । दो = दो । फास = स्पर्श । त = वह । हवे = होता है । सहावगुण = स्वभाव गुणवाला । विहावगुणमिदि = विभावगुणवाला । भणिद = कहा गया । जिणसमये = जिनशासन मे । सव्वपयडत्त = सबके लिए प्रकटता गुणवाला ।

126 अण्णणिरावेक्खो [(अण्ण) वि–(णिरावेक्ख) 1/1] जो (ज) 1/1 सवि परिणामो (परिणाम) 1/1 सो (त) 1/1 सवि सहावपज्जाओ [(सहाव)–(पज्जाअ) 1/1] खधसरूवेण [(खध)–(सरूव) 3/1] पुणो (अ) = और परिणामो (परिणाम) 1/1 सो (त) 1/1 सवि विहावपज्जाओ [(विहाव)–(पज्जाअ) 1/1] ।

126 अण्णणिरावेक्खो = दूसरो की अपेक्षारहित परिणमन । जो = जो । परिणामो = परिणमन । सो = वह । सहावपज्जाओ = स्वभाव-परिणमन । खधसरूवेण = स्कन्धरूप से । पुणो = और । परिणामो = परिणमन । सो = वह । विहावपज्जाओ = विभाव-परिणमन ।

127 धम्मत्थिकायमरस [(धम्मत्थिकाय)+(अरस)] धम्मत्थिकाय (धम्मत्थिकाय) 1/1 अरस (अरस) 1/1 वि अवण्णगध [(अवण्ण)+(अगध)] अवण्ण (अवण्ण) 1/1 वि अगध (अगध) 1/1 वि असद्दमप्फास [(असद्द)+(अप्फास)] असद्द (असद्द) 1/1 वि अप्फास (अप्फास) 1/1 वि लोगोगाढ [(लोग)+(ओगाढ)] [लोग-(ओगाढ) 1/1 वि] पुट्ठं (पुट्ठ) भूकृ 1/1 अनि पिहुलमसखादियपदेस [(पिहुल)+(असखादियपदेस)] पिहुल (पिहुल) 1/1 वि असखादियपदेस (असखादियपदेस) 1/1 वि।

127 धम्मत्थिकायमरसं = धर्मास्तिकाय, रसरहित । अवण्णगध = वर्णरहित, गधरहित । असद्दमप्फासं = शब्दरहित, स्पर्शरहित । लोगोगाढ = लोक मे व्याप्त । पुट्ठं = छुए हुए । पिहुलमसखादियपदेस = व्याप्त, असख्यात प्रदेश-वाला ।

128 उदयं (उदय) 1/1 जह (अ) = जिस प्रकार मच्छाण (मच्छ) 6/2 गमणाणुग्गहयर [(गमण)+(अणुग्गहयर)] [(गमण)-(अणुग्गहयर) 1/1 वि] हवदि (हव) व 3/1 अक लोए (लोअ) 7/1 तह (अ) = उसी प्रकार जीवपुग्गलाण [(जीव)-(पुग्गल) 6/2] धम्म (धम्म) 1/1 दव्व (दव्व) 1/1 वियाणेहि (वियाण) विधि 2/1 सक ।

128 उदय = जल । जह = जिस प्रकार । मच्छाण = मछलियो के । गमणाणुग्गहयर = गमन मे उपकार करनेवाला । हवदि = होता है । लोए = लोक मे । तह = उसी प्रकार । जीवपुग्गलाण = जीव और पुद्गलो के लिए । धम्म = धर्म । दव्व = द्रव्य । वियाणेहि = समझो ।

129 जह (अ) = जिस प्रकार हवदि (हव) व 3/1 अक धम्मदव्व (धम्मदव्व) 1/1 तह (अ) = उसी प्रकार त (त) 2/1 सवि जाणेह (जाण) विधि 2/2 सक दव्वमधम्मक्ख [(दव्व)+(अधम)+(अक्ख)] दव्व (दव्व) 2/1 [(अधम)-(अक्खा)[1] 2/1 वि] ठिदिकिरियाजुत्ताण [(ठिदि)-(किरिया)-(जुत्त) भूकृ 4/2 अनि] कारणभूद [(कारण)-(भूद) भूकृ 1/1 अनि] तु (अ) = किन्तु पुढवी (पुढवी) 1/1 व (अ) = की तरह ।

1 समास के अन्त मे अर्थ होता है 'नामवाला' ।

129 जह (अ) = जिस प्रकार । हवदि = होता है । धम्मदव्व = धर्मास्तिकाय द्रव्य । तह = उसी प्रकार । त = उस को । जाणेह = जानो । दव्वमधम्मक्खं

= दव्व + अधम + अक्खं = उस अधर्मास्तिकाय नामवाले द्रव्य को। जाणेह = जानो। ठिदिकिरियाजुत्ताण = स्थिति क्रिया मे तत्पर के लिए। कारणभूद = कारण बना हुआ। तु = किन्तु। पुढवी = पृथ्वी। व = की तरह।

130. ण (अ) = नही य (अ) = तथा गच्छदि (गच्छ) व 3/1 सक धम्मत्थी (धम्मत्थि) 1/1 गमण (गमण) 2/1 ण (अ) = नही करेदि (कर) व 3/1 सक अण्णदवियस्स[1] [(अण्ण)-(दविय) 6/1] हवदि (हव) व 3/1 अक गती[2] (गति) 2/2 स (स) मूलशब्द 3/1 वि प्पसरो (प्पसर) 1/1 जीवाण (जीव) 6/2 पुग्गलाण (पुग्गल) 6/2 च (अ) = और।

1 कभी-कभी द्वितीया के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या-3-134)।

2 कभी-कभी सप्तमी के स्थान पर द्वितीया का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या-3-137)।

130 ण = नही। य = तथा। गच्छदि = गतिशील नही होता है। धम्मत्थी = धर्मास्तिकाय। गमण = गति। ण = नही। करेदि = प्रदान करता है। अण्णदवियस्स = दूसरे द्रव्यो को। हवदि = होता है। गती = गति के→ गति मे। स = स्व से। प्पसरो = फैलाव। जीवाणं = जीवो (की)। पुग्गलाण = पुद्गलो की। च = और।

131 विज्जदि (विज्ज) व 3/1 अक जेसिं (ज) 6/2 स गमण (गमण) 1/1 ठाणं (ठाण) 1/1 पुण (अ) = फिर तेसिमेव [(तेसिं) + (एव)] तेसिं (त) 6/2 स एव (अ) = ही सभवदि (सभव) व 3/1 अक ते (त) 1/2 सवि सगपरिणामेहिं [(सग) वि - (परिणाम) 3/2] दु (अ) = अत गमण (गमण) 2/1 ठाण (ठाण) 2/1 च (अ) = और कुव्वति (कुव्व) व 3/2 सक।

131 विज्जदि = होती है। जेसिं = जिन की। गमण = गति। ठाणं = स्थिति। पुण = फिर। तेसिमेव = उन्ही की। सभवदि = होती है। ते = वे। सगपरिणामेहिं = अपने परिणमन के द्वारा। दु = अत। गमणं = गति (को)। ठाण = स्थिति को। च = और। कुव्वति = उत्पन्न करते हैं।

132 **गमणणिमित्त** [(गमण) – (णिमित्त) 1/1] **धम्म** (धम्म) 1/1 **अधम्म** (अधम्म) 1/1 **ठिदि** (ठिदि) मूलशब्द 7/1 **जीवपोग्गलाण** [(जीव) – (पोग्गल) 6/2] **च** (अ) = और **अवगहण** (अवगहण) 1/1 **आयास** (आयास) 1/1 **जीवादीसव्वदव्वाणं** [(जीव) + (आदी) + (सव्व) + (दव्वाण)] [(जीव) – (आदी)[1] – (सव्व) वि – (दव्व) 6/2] ।

1 समास मे 'आदि' का 'आदी' किया जा सकता है (हे प्रा व्या 1-67) ।

132 **गमणणिमित्तं** = गति मे निमित्त । **धम्म** = धर्मास्तिकाय । **अधम्म** = अधर्मास्तिकाय । **ठिदि** = स्थिति मे । **जीवपोग्गलाण** = जीवो, पुद्गलो की । **च** = और । **अवगहण** = ठहरने का स्थान । **आयास** = आकाश । **जीवादीसव्वदव्वाण** = जीव आदि सभी द्रव्यो के लिए ।

133 **सव्वेसिं** (सव्व) 6/2 स **जीवाणं** (जीव) 6/2 **सेसाण** (सेस) 6/2 **तह य** (अ) = और इसी प्रकार **पुग्गलाण** (पुग्गल) 6/2 **च** (अ) = और **ज** (ज) 1/1 सवि **देदि** (दा) व 3/1 सक **विवरमखिल** [(विवर) + (अखिल)] विवर (विवर) 2/1 अखिल (अखिल) 2/1 वि **त** (त) 1/1 सवि **लोए** (लोअ) 7/1 **हवदि** (हव) व 3/1 अक **आयास** (आयास) 1/1 ।

133 **सव्वेसिं** = सभी (के लिए) । **जीवाण** = जीवो के लिए । **सेसाण** = शेष के लिए । **तह य** = और इसी प्रकार । **पुग्गलाण** = पुद्गलो के लिए । **च** = और । **जं** = जो । **देदि** = देता है । **विवरमखिल** = पूरा स्थान । **त** = वह । **लोए** = लोक मे । **हवदि** = होता है । **आयास** = आकाश ।

134 **पुग्गलजीवणिबद्धो** [(पुग्गल) – (जीव) – (णिबद्ध) भूकृ 1/1 अनि] **धम्माधम्मत्थिकायकालड्ढो** [(धम्म) + (अधम्मत्थिकाय) + (काल) + (अड्ढो)] [(धम्म) – (अधम्मत्थिकाय) – (काल) – (अड्ढ) 1/1 वि] **वट्टदि** (वट्ट) व 3/1 अक **आयासे** (आयास) 7/1 **जो** (ज) 1/1 सवि **लोगो** (लोग) 1/1 **सो** (त) 1/1 सवि **सव्वकाले** [(सव्व) वि – (काल) 7/1] **दु** (अ) = पादपूरक ।

134 **पुग्गलजीवणिबद्धो** = पुद्गल और जीवो से जुडा हुआ । **धम्माधम्मत्थिकायकालड्ढो** = धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, काल से युक्त । **वट्टदि** = है । **आयासे** = आकाश मे । **जो** = जो । **लोगो** = लोक । **सो** = वह । **सव्वकाले** = सभी समय मे ।

135 सब्भावसभावाण [(सब्भाव) – (सभाव)[1] 6/2] जीवाण[1] (जीव) 6/2 तह य (अ) = उसी प्रकार पोग्गलाण (पोग्गल) 6/2 च (अ) = और परियट्टणसंभूदो [(परियट्टण) – (सभूद) भूक्र 1/1 अनि] कालो (काल) 1/1 णियमेण (क्रिविअ) = अनिवार्यत पण्णत्तो = कहा गया ।

1 कभी कभी सप्तमी के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3–134) ।

135 सब्भावसभावाण = अस्तित्व स्वभाववाले । जीवाणं = जीवो (मे) । तह य = उसी प्रकार । पोग्गलाण = पुद्गलो मे । च (अ) = और । परियट्टण-सभूदो = परिवर्तन, उत्पन्न हुआ । कालो = काल । णियमेण = अनिवार्यत । पण्णत्तो = कहा गया ।

136 णत्थि (अ) = नही चिर (अ) = दीर्घ काल वा = और खिप्प (अ) = तुरन्त मत्तारहिदं [(मत्ता) – (रहिद) 1/1 वि] तु (अ) = तथा सा (ता) 1/1 सवि वि (अ) = भी खलु (अ) = पादपूरक मत्ता (मत्ता) 1/1 पुग्गलदव्वेण [(पुग्गल) – (दव्व) 3/1] विणा (अ) = विना तम्हा (अ) = इसलिए कालो (काल) 1/1 पडुच्चभवो [(पडुच्च) अ = आश्रय करके – (भव)[1] 1/1 वि] ।

1. समास के अन्त मे ।

136 णत्थि = नही । चिर = दीर्घकाल । वा = और । खिप्पं = तुरन्त । मत्ता-रहिद = माप के विना । तु = तथा । सा = वह । वि = भी । मत्ता = माप । पुग्गलदव्वेण = पुद्गल द्रव्य के । विणा = विना । तम्हा = इसलिए । कालो = काल । पडुच्चभवो = आश्रय से उत्पन्न ।

137 कालो (काल) 1/1 परिणामभवो [(परिणाम) – (भव) 1/1 वि] परिणामो (परिणाम) 1/1 दव्वकालसंभूदो [(दव्वकाल)—(सभूद) भूक्र 1/1 अनि] दोण्ह (दो) 6/2 वि एस (एत) 1/1 सवि सहावो (सहाव) 1/1 कालो (काल) 1/1 खणभगुरो (खणभगुर) 1/1 वि णियदो (णियद) 1/1 वि ।

137 कालो = काल । परिणामभवो = परिवर्तन से उत्पन्न । परिणामो = परिवर्तन । दव्वकालसभूदो = द्रव्य काल से उत्पन्न । दोण्हं = दोनो का । एस = यह । सहावो = स्वभाव । कालो = काल । खणभंगुरो = नश्वर । णियदो = स्थायी ।

138 जीवादीदव्वाण [(जीव) + (आदी) + (दव्वाण)] [(जीव)-(आदी)-(दव्व) 6/2] परिवट्टकारण [(परिवट्टण)-(कारण) 1/1] हुवे (हुव) व 3/1 अक कालो (काल) 1/1 धम्मादिचउण्णाण [(धम्म) + (आदि) + (चउ) + (अण्णाण)] [(धम्म)-(आदि)-(चउ)-(अण्ण)[1] 6/2 वि] सहावगुणपज्जया [(स) वि-(हाव)-(गुण)-(पज्जय) 1/2] होंति (हो) व 3/2 अक ।

1 कभी-कभी सप्तमी के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3-134) अण्णाण→ण्णाण (स्वरलोप, पृ 123, अभिनव प्राकृत व्याकरण) ।

138 जीवादीदव्वाण = जीव आदि द्रव्यों के । परिवट्टणकारण = परिवर्तन का कारण । हुवे = होता है । कालो = काल । धम्मादिचउण्णाण = धर्मादि चार अन्य । सहावगुणपज्जया = स्वभावगुणपर्याय । होंति = होती हैं ।

139 दव्व (दव्व) 1/1 सल्लक्खणिय (सल्लक्खणिय) 1/1 वि उत्पादव्वयधुवत्तसजुत्त (उत्पाद) - (व्वय) - (धुवत्त)-(सजुत्त) भूकृ 1/1 अनि] गुणपज्जयासय [(गुण) + (पज्जय) + (आसय)] [(गुण)-(पज्जय)-(आसय) 1/1] वा (अ) = और ज (ज) 1/1सवि त (त) 1/1 सवि भण्णति (भण्ण) व 3/2 सक सव्वण्हू (सव्वण्हु) 1/2 वि ।

139 दव्व = द्रव्य । सल्लक्खणिय = सत्लक्षणयुक्त । उत्पादव्वयधुवत्तसजुत्त = उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य से सहित । गुणपज्जयासय = गुण और पर्याय का आश्रय । वा = और । ज = जो । त = वह । भण्णति = कहते है । सव्वण्हू = सर्वज्ञ ।

140 सत्ता (सत्ता) 1/1 सव्वपयत्था [[(सव्व)-(पयत्था) 1/1] वि] सविस्सरूवा (सविस्सरूवा) 1/1 वि अणतपज्जाया [(अणत) वि-(पज्जाया) 1/1 वि] भगुप्पादधुवत्ता [(भग) + (उप्पाद) + (धुवत्ता)] [[(भग)-(उप्पाद)-(धुवत्ता)] वि] सप्पडिवक्खा (सप्पडिवक्खा) 1/1 वि हवदि (हव) व 3/1 अक एक्का (एक्का) 1/1 वि ।

140 सत्ता = सत्ता । सव्वपयत्था = सर्वपदार्थमय । सविस्सरूवा = अनेक प्रकार सहित । अणतपज्जाया = अनन्त पर्यायवाली । भगुप्पादधुवत्ता = उत्पाद,

व्यय और ध्रुवतामय। सप्पडिवक्खा = विरोधी पहलू सहित। हवदि = होती है। एक्का = एक।

141 उप्पत्ती (उप्पत्ति) 1/1 व = और विणासो (विणास) 1/1 दव्वस्स (दव्व) 6/1 य (अ) = ही णत्थि = न अत्थि (अ) = है (अस्तित्व) सब्भावो (सब्भाव) 1/1 विगमुप्पादधुवत्त [(विगम) + (उप्पाद) + (धुवत्त)] [(विगम)-(उप्पाद)-(धुवत्त) 2/1] करेंति (कर) व 3/2 सक तस्सेव [(तस्स) + (एव)] तस्स (त) 6/1 स एव (अ) = ही पज्जाया (पज्जाय) 1/2।

141 उप्पत्ती = उत्पत्ति। व = और। विणासो = विनाश। दव्वस्स = द्रव्य की। य = ही। णत्थि = न। अत्थि = अस्तित्व। सब्भावो = स्वभाववाला। विगमुप्पादधुवत्त = नाश, उत्पत्ति, ध्रुवता। करेंति = प्रकाशित करती हैं। तस्सेव = उसकी ही। पज्जाया = पर्यायें।

142 पज्जयविजुद [(पज्जय)-(विजुद) 1/1 वि] दव्व (दव्व) 1/1 दव्वविजुत्ता [(दव्व)-(विजुत्त) 1/2 वि] य (अ) = भी पज्जया (पज्जय) 1/2 णत्थि (अ) = नहीं है दोण्ह (दो) 6/2 अणण्णभूद [(अणण्ण)-(भूद) भूकृ 1/1 अनि] भाव (भाव) 1/1 समणा (समण) 1/2 परूविंति (परूव) व 3/2 सक आर्ष।

142 पज्जयविजुद = पर्यायरहित। दव्व = द्रव्य। दव्वविजुत्ता = द्रव्यरहित। य = भी। पज्जया = पर्याय। णत्थि = नहीं है। दोण्ह = दोनों का। अणण्णभूद = अभिन्न बना हुआ। भाव = अस्तित्व। समणा = श्रमण। परूविंति = कहते हैं।

143 दव्वेण (दव्व) 3/1 विणा (अ) = विना। ण (अ) = नहीं गुणा (गुण) 1/2 गुणेहिं (गुण) 3/2 दव्व (दव्व) 1/1 ण (अ) = नहीं सभवदि (सभव) व 3/1 अक अव्वदिरित्तो (अ-व्वदिरित्त) भूकृ 1/1 अनि भावो (भाव) 1/1 दव्वगुणाण [(दव्व)-(गुण) 6/2] हवदि (हव) व 3/1 अक तम्हा = इसलिए।

143 दव्वेण = द्रव्य के। विणा = बिना। ण = नहीं। गुणा = गुण। गुणेहिं = गुणों के। दव्व = द्रव्य। विणा = बिना। सभवदि = होता है। अव्वदिरित्तो = अभिन्न। भावो = अस्तित्व। दव्वगुणाण = द्रव्य और गुणों का। हवदि = होता है। तम्हा = अत।

144 भावस्स (भाव) 6/1 णत्थि = नही णासो (णास) 1/1 अभावस्स (अभाव) 6/1 चेव (अ) = पादपूरक उप्पादो (उप्पाद) 1/1 गुणपज्जयेसु [(गुण)-(पज्जय)[1] 7/2] भावा (भाव) 1/2 उप्पादवए [(उप्पाद)-(वअ) 2/2] पकुव्वंति (पकुव्व) व 3/2 सक।

1 कभी-कभी तृतीया के स्थान पर सप्तमी का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3-135)।

144 भावस्स = सत् का। णत्थि = नही। णासो = नाश। णत्थि = नही। अभावस्स = असत् का। उप्पादो = उत्पाद। गुणपज्जयेसु = गुण-पर्यायो मे → गुण-पर्यायो द्वारा। भावा = द्रव्य। उप्पादवए = उत्पाद-व्यय। पकुव्वंति = करते है।

145 भावा (भाव) 1/2 जीवादीया [(जीव) + (अदीया)] [(जीव)-(अदीय) 1/2] जीवगुणा [(जीव)-(गुण) 1/2] चेदणा (चेदणा) 1/1 य (अ) = और उवओगो (उवओग) 1/1 सुरणरणारयतिरिया [(सुर)-(णर)-(णारय) वि-(तिरिय) 1/2] जीवस्स (जीव) 6/1 य (अ) = और पज्जया (पज्जय) 1/2 बहुगा (बहुग) 1/1 वि।

145. भावा = सत्। जीवादीया = जीव आदि। जीवगुणा = जीव के गुण। चेदणा = चेतना। य = और। उवओगो = ज्ञान। सुरणरणारयतिरिया = देव, मनुष्य, नारकी और तिर्यञ्च। जीवस्स = जीव की। य = और। पज्जया = पर्याय। बहुगा = अनेक।

146 मणुसत्तणेण (मणुसत्तण) 3/1 णट्ठो (णट्ठ) भूक 1/1 अनि देही (देहि) 1/1 देवो (देव) 1/1 हवेदि (हव) व 3/1 अक इदरो (इदर) 1/1 वि वा (अ) = अथवा उभयत्त (उभयत्त) मूलशब्द 7/1 वि जीवभावो [(जीव)-(भाव) 1/1] ण (अ) = न णस्सदि (णस्स) व 3/1 अक जायदे (जा→जाय) व 3/1 अक अण्णो (अण्ण) 1/1 वि।

146 मणुसत्तणेण = मनुष्यत्व से। णट्ठो = लुप्त हुआ। देही = जीव। देवो = देव। हवेदि = होता है। इदरो = अन्य कोई पर्यायवाला। वा = अथवा। उभयत्त = दोनो मे। जीवभावो = जीव पदार्थ। ण = न। णस्सदि = नष्ट होता है। ण = न। जायदे = उत्पन्न होता है। अण्णो = नया।

147 सो (त) 1/1 सवि चेव (अ) = ही जादि (जा) व 3/1 अक मरणं (मरण) 2/1 जादि (जा) व 3/1 सक ण (अ) = न णट्ठो (णट्ठ) भूकृ 1/1 अनि चेव (अ) = ही उप्पण्णो (उप्पण्ण) भूकृ 1/1 अनि उप्पण्णो (उप्पण्ण) भूकृ 1/1 अनि य (अ) = और विणट्ठो (विणट्ठ) भूकृ 1/1 अनि देवो (देव) 1/1 मणुसो (मणुस) 1/1 त्ति (अ) = इस प्रकार पज्जाओ (पज्जाय) 1/1 ।

147 सो = वह । चेव = ही । जादि = उत्पन्न होता है । मरण = मरण को । जादि = प्राप्त होता है । ण = न । णट्ठो = नष्ट हुआ । ण = न । चेव = ही । उप्पण्णो = उत्पन्न हुआ । उप्पण्णो = उत्पन्न हुई । य = और । विणट्ठो = नष्ट हुई । देवो = देव । मणुसो = मनुष्य । त्ति = इस प्रकार । पज्जाओ = पर्याय ।

148 अत्थो (अत्थ) 1/1 खलु (अ) = पादपूरक दव्वमओ (दव्वमअ) 1/1 दव्वाणि (दव्व) 1/2 गुणप्पगाणि [(गुण) + (अप्पगाणि)] [(गुण)-(अप्पग) 1/2 वि] भणिदाणि (भण) भूकृ 1/2 तेहिं (त) 3/2 सवि पुणो (अ) = और पज्जाया (पज्जाय) 1/2 पज्जयमूढा [(पज्जय)-(मूढ) 1/2 वि] हि (अ) = ही परसमया (परसमय) 1/2 वि ।

148 अत्थो = पदार्थ । दव्वमओ = द्रव्यमय । दव्वाणि = द्रव्य । गुणप्पगाणि = गुणस्वरूपवाले । भणिदाणि = कहे गये । तेहिं = उन से । पुणो = और । पज्जाया = पर्याय । पज्जयमूढा = पर्यायो मे मोहित । हि = ही । परसमया = मूर्च्छित ।

149 जे (ज) 1/2 सवि पज्जयेसु (पज्जय) 7/2 णिरदा (णिरद) भूकृ 1/2 अनि जीवा (जीव) 1/2 परसमयिग (परसमयिग) मूलशब्द 1/2 वि त्ति (अ) = शब्दस्वरूपद्योतक णिद्दिट्ठा (णिद्दिट्ठ) भूकृ 1/2 अनि आदसहावम्मि [(आद)-(सहाव) 7/1] ठिदा (ठिद) भूकृ 1/2 अनि ते (त) 1/2 सवि सगसमया [(सग) वि - (समय) 1/2] मुणेदव्वा (मुण) विधि कृ 1/2 ।

149 जे = जो । पज्जयेसु = पर्यायो मे । णिरदा = लीन । जीवा = जीव । परसमयिग = मूर्च्छित । णिद्दिट्ठा = कहे गये । आदसहावम्मि = आत्म स्वभाव मे । ठिदा = ठहरे हुए । ते = वे । समगमया = जाग्रत । मुणेदव्वा = समझे जाने चाहिए । □

आचार्य कुन्दकुन्द : द्रव्य-विचार

गाथा-क्रम तथा मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम

गाथा-क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम	गाथा-क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम
1	प्रवचनसार 2 6	17	प्रवचनसार 2 48
2	प्रवचनसार 2 13	18	प्रवचनसार 2 52
3	प्रवचनसार 2 35	19	पंचास्तिकाय 7
4	पंचास्तिकाय 122	20	पंचास्तिकाय 27
5	पंचास्तिकाय 125	21	पंचास्तिकाय 30
6	नियमसार 9	22	पंचास्तिकाय 109
7	पंचास्तिकाय 97	23	नियमसार 49
8	पंचास्तिकाय 99	24	प्रवचनसार 2 33
9	प्रवचनसार 2 40	25	पंचास्तिकाय 38
10-11	प्रवचनसार 2 41-42	26	प्रवचनसार 1 31
12	पंचास्तिकाय 124	27	प्रवचनसार 2 32
13	पंचास्तिकाय 98	28	पंचास्तिकाय 39
14	नियमसार 34	29	पंचास्तिकाय 112
15-16	नियमसार 35-36	30	पंचास्तिकाय 113

गाथा-क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम	गाथा-क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम
31	पचास्तिकाय 114	49	प्रवचनमार 2 102
32	पचास्तिकाय 115	50	प्रवचनसार 2 99
33	पचास्तिकाय 116	51	प्रवचनसार 2 101
34	पचास्तिकाय 117	52	प्रवचनसार 2 100
35	पचास्तिकाय 33	53	प्रवचनसार 1 23
36	पचास्तिकाय 128	54	प्रवचनसार 1 27
37	पचास्तिकाय 129	55	प्रवचनसार 1 35
38	पचास्तिकाय 130	56	प्रवचनसार 1 51
39	प्रवचनसार 1 54	57	प्रवचनमार 1 22
40	मोक्षपाहुड 4	58	प्रवचनसार 1 23
41	मोक्षपाहुड 5	59	प्रवचनसार 1 20
42	मोक्षपाहुड 7	60	प्रवचनसार 1 53
43	समयसार 14	61	प्रवचनसार 1 60
44	भावपाहुड 64	62	प्रवचनसार 1 59
45	समयसार 11	63	पचास्तिकाय 29
46	समयसार 141	64	प्रवचनसार 1 67
47	समयसार 142	65	प्रवचनसार 1 68
48	प्रवचनसार 1 81	66	प्रवचनसार 2 95

गाथा-क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम	गाथा-क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम
67	समयसार 91	85	पचास्तिकाय 136
68	समयसार 219	86	पचास्तिकाय 137
69	प्रवचनसार 2 59	87	पचास्तिकाय 138
70	समयसार 265	88	पचास्तिकाय 139
71	प्रवचनसार 2 87	89	पचास्तिकाय 140
72	प्रवचनसार 2 59	90	भावपाहुड 76
73	प्रवचनसार 1 42	91	प्रवचनसार 2 65
74	समयसार 102	92	प्रवचनसार 2 66
75	समयसार 126	93	भावपाहुड 77
76	समयसार 130	94	प्रवचनसार 64
77	समयसार 131	95	भावपाहुड 86
78	समयसार 83	96	समयसार 153
79	समयसार 84	97	प्रवचनसार 2 89
80	प्रवचनसार 2 63	98	मोक्षपाहुड 17
81	प्रवचनसार 1 46	99	पचास्तिकाय 167
82	प्रवचनसार 1 69	100	पचास्तिकाय 158
83	पचास्तिकाय 132	101	प्रवचनसार 1 78
84	पचास्तिकाय 135	102	प्रवचनसार 1 13

गाथा-क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम	गाथा-क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम
103	प्रवचनसार 1 11	121	नियमसार 22
104	प्रवचनसार 1 7	122	नियमसार 23
105	प्रवचनसार 1 16	123	नियमसार 24
106	प्रवचनसार 1 15	124	नियमसार 26
107	प्रवचनसार 1 14	125	नियमसार 27
108	प्रवचनसार 1 44	126	नियमसार 28
109	पचास्तिकाय 77	127	पचास्तिकाय 83
110	पचास्तिकाय 110	128	पचास्तिकाय 85
111	पचास्तिकाय 79	129	पचास्तिकाय 86
112	पचास्तिकाय 81	130	पचास्तिकाय 88
113	पचास्तिकाय 82	131	पचास्तिकाय 89
114	प्रवचनसार 2 69	132	नियमसार 30
115	प्रवचनसार 2 71	133	पचास्तिकाय 90
116	प्रवचनसार 2 72	134	प्रवचनसार 2 36
117	प्रवचनसार 2 73	135	पचास्तिकाय 23
118	प्रवचनसार 2 74	136	पचास्तिकाय 26
119	प्रवचनसार 2 75	137	पचास्तिकाय 100
120	नियमसार 21	138	नियमसार 33

गाथा-क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम	गाथा-क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम
139	पचाम्तिकाय 10	145	पचास्तिकाय 16
140	पचास्तिकाय 8	146	पचास्तिकाय 17
141	पचाम्तिकाय 11	147	पचास्तिकाय 18
142	पचास्तिकाय 12	148	प्रवचनसार 2 1
143	पचाम्तिकाय 13	149	प्रवचनसार 2 2
144	पचास्तिकाय 15		□

पुस्तकालय
34909
नगर, जयपुर

सहायक पुस्तकें एवं कोश

1.	समयसार	:	आचार्य कुन्दकुन्द (सपादन बलभद्र जैन) (श्री कुन्दकुन्द भारती, दिल्ली)
2.	णियमसार	:	आचार्य कुन्दकुन्द (सम्पादक बलभद्र जैन) (श्री कुन्दकुन्द भारती, दिल्ली)
3.	प्रवचनसार	:	आचार्य कुन्दकुन्द (सम्पादक—मनोहरलाल जैन) परमश्रुत प्रभावक मण्डल, अगास
4.	पंचास्तिकाय	:	आचार्य कुन्दकुन्द सम्पादक—पन्नालाल बाकलीवाल परमश्रुत प्रभावक मण्डल, अगास
5.	अष्टपाहुड (कुन्दकुन्द भारती)	:	सम्पादक प पन्नालाल साहित्याचार्य (श्रुत भण्डार व ग्रन्थ प्रकाशन समिति फल्टण, महाराष्ट्र)
6	हेमचन्द्र प्राकृत व्याकरण भाग 1-2	:	व्याख्याता, श्री प्यारचन्दजी महाराज (श्री जैन दिवाकर दिव्य ज्योति कार्यालय, मेवाडी बाजार, ब्यावर)
7.	प्राकृत भाषाओ का व्याकरण	:	डॉ आर पिशल (बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् पटना)
8	अभिनव प्राकृत व्याकरण	·	डॉ नेमिचन्द्र शास्त्री (तारा पब्लिकेशन, वाराणसी)
9.	प्राकृत भाषा एवं साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास	:	डॉ नेमिचन्द्र शास्त्री (तारा पब्लिकेशन, वाराणसी)
10	प्राकृतमार्गोपदेशिका	:	प बेचरदास जीवराज दोशी (मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली)
11.	सस्कृत निबन्ध-शतिका	:	वामन शिवराम आप्टे (रामनारायण बेनीमाधव, इलाहाबाद)
12.	प्रौढ-रचनानुवाद कौमुदी	:	डॉ कपिलदेव द्विवेदी (विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी)
13.	पाइअ-सद्द-महण्णवो	:	प हरगोविन्ददास त्रिकमचन्द सेठ (प्राकृत ग्रन्थ परिषद्, वाराणसी)
14.	सस्कृत हिन्दी-कोश		वामन शिवराम आप्टे (मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली)
15	Sanskrata-English Dictionary	:	M Monier Williams (Munshiram Manoharlal, New Delhi)
16.	बृहत् हिन्दी कोश	:	सम्पादक कालिकाप्रसाद आदि (ज्ञानमण्डल लिमिटेड, बनारस)